Dec
2024

मासिक

# अरफ़ात किरण

रायबरेली

## तारीख़ एक सोया हुआ शेर है

"तारीख़ (इतिहास) को उल्टा सफ़र कराने में मुल्क बड़े ख़तरों और मुसीबतों में पड़ जाएगा और तामीर व तरक़्क़ी के काम रुक जाएंगे। यह एक सोया हुआ शेर है, इसको जगाना अक़्लमन्दी के ख़िलाफ़ है। अब भी मेरी दुनिया की तारीख़ के एक तालिब इल्म और मुसन्निफ़ (लेखक) की हैसियत से यह सोची-समझी राय है कि नये सिरे से यह तारीख़ का उल्टा सफ़र उन ग़ैर ज़रूरी मुश्किलों को पैदा करने और मुल्क को पीछे की तरफ़ ले जाने के बराबर होगा जिसकी इस रवां-दवां ज़माने में बिल्कुल गुंजाइश नहीं।" (कारवाने ज़िन्दगी: ४/१३२-१३३)

मुफ़क्किर-ए-इस्लाम
हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

# अज़्म व इस्तिक़लाल की ज़रूरत

"बस सफ़र से पहले ज़ादे सफ़र की फ़िक्र कर लो और तूफ़ान से पहले कश्ती बना लो, क्योंकि सफ़र नज़दीक तर है और तूफ़ान के आसार ज़ाहिर हो गए हैं, जिनके पास ज़ादे राह न होगा, वह भूखे मरेंगे और जिनके पास कश्ती न होगी वह सैलाब में ग़र्क हो जाएंगे। जब तुम देखते हो कि मतला गुबार आलूद हुआ और दिन की रोशनी बदलियों में छिप गई तो तुम समझते हो कि बर्क़ व बारां का वक़्त आ गया है, फिर तुम्हें क्या हो गया कि दुनिया की अमन व सलामती का मतला गुबार आलूद हो रहा है, दीने इलाही की रोशनी जुलमत व कुफ़्र व तुग्यान में छिप रही है मगर तुम यक़ीन नहीं करते कि मौसम बदलने वाला है और तैयार नहीं होते कि इन्सानी बादशाहों से कटकर ख़ुदा की बादशाहत के मुतीअ हो जाओ, क्या तुम चाहते हो कि ख़ुदा के तख़्ते जलाल की मुनादी फिर बुलन्द हो और उसकी ज़मीन सिर्फ़ उसी की हो जाए।

आह! हम बहुत सो चुके और ग़फ़लत व सरशारी की इन्तिहा हो चुकी, हमने अपने ख़ालिक़ से हमेशा गुरूर किया लेकिन मख़्लूक़ के सामने कभी भी फ़रोतनी से न शरमाए, हमारा वस्फ़ यह बतलाया गया था कि:

"मोमिनों के साथ निहायत आजिज़ व नर्म, मगर काफ़िरों के मुक़ाबले में निहायत मग़रूर व सख़्त।" (सूरह माइदा: ५४)

हमारे अस्लाफ़े किराम की यह तारीफ़ की गई थी कि:

"काफ़िरों के लिए निहायत सख़्त हैं, पर आपस में निहायत रहम वाले और मेहरबान!" (सूरह फ़तेह: २९)

फिर हमने अपनी तमाम ख़ूबियां गंवा दीं और दुनिया की मग़्ज़ूब क़ौमों की तमाम बुराइयां सीख लीं, हम अपनों के आगे सरकश हो गए और ग़ैरों के आगे ज़िल्लत से झुकने लग गए। हमने अपने परवरदिगार के आगे सवाल का हाथ नहीं बढ़ाया लेकिन बन्दों के दस्तरख़्वान के गिरे हुए टुकड़े चुनने लगे। हमने ज़मीन व आसमान के शहंशाह से नाफ़रमानी की लेकिन ज़मीन के चन्द जज़ीरों के मालिकों को अपना ख़ुदावन्द समझ लिया, हम पूरे दिन में एक बार ख़ुदा का नाम हैबत और ख़ौफ़ के साथ नहीं लेते, सैंकड़ों मर्तबा अपने ग़ैर मुस्लिम हाकिमों के तसव्वुर से लरज़ते और कांपते रहते हैं।

इससे पहले कि ख़ुदा की बादशाही का दिन नज़दीक आए, क्या बेहतर नहीं कि इसके लिए हम अपनी हद तक तैयारी कर लें, ताकि जब उसका मुक़द्दस दिन आए तो हम यह कहकर निकाल न दिये जाएं कि तुमने ग़ैरों की हुकूमत के आगे ख़ुदा की हुकूमत को भुला दिया था, जाओ आज ख़ुदा की बादशाहत में भी तुम बिल्कुल भुला दिये गये हो।"

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद (रह०)

(कुरआन का क़ानूने उरूज-ओ-ज़वाल)

بِسۡمِ ٱللَّهِ ٱلرَّحۡمَٰنِ ٱلرَّحِيمِ


मासिक

# अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:12 दिसम्बर 2024 ई० वर्ष:16



**सम्पादक**

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

**सम्पादकीय मण्डल**

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी

**सह सम्पादक**

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

**मुद्रक**

मो० हसन नदवी

**अनुवादक**

मोहम्मद सैफ़


## अल्लाह की पकड़

**अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:**

"बिला शुब्हा अल्लाह तबारक व तआला ज़ालिम को (एक हद तक) ढील देता है और जब उसकी पकड़ फ़रमाता है तो फिर उसको नहीं छोड़ता है)"

(सही मुस्लिम: 6746)


E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

**मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001**

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

# लहू का सुराग़

फ़ैज़ अहमद फ़ैज़

कहीं नहीं है कहीं भी नहीं लहू का सुराग़
न दस्त-ओ-नाख़ून-ए-क़ातिल न आस्तीं पे निशाँ
न सुर्ख़ी-ए-लब-ए-ख़ंजर न रंग-ए-नोक-ए-सिनाँ
न ख़ाक पर कोई धब्बा न बाम पर कोई दाग़
कहीं नहीं है कहीं भी नहीं लहू का सुराग़
न सर्फ़-ए-ख़िदमत-ए-शाहाँ कि ख़ूँ-बहा देते
न दीं की नज़्र कि बैआना-ए-जज़ा देते
न रज़्म-गाह में बरसा कि मोतबर होता
किसी अलम पे रक़म हो के मुश्तहर होता
पुकारता रहा बे-आसरा यतीम लहू
किसी को बहर-ए-समाअत न वक़्त था न दिमाग़
न मुद्दई न शहादत हिसाब पाक हुआ
ये ख़ून-ए-ख़ाक-नशीनाँ था रिज़्क़-ए-ख़ाक हुआ

## इस अंक में:


मुल्क के सच्चे ख़ैरख़्वाहों से मुख़्लिसाना अपील.....3

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुल्क के मसलों में तीन चीज़ें फ़ौरी तवज्जो की मुस्तहिक़.....4

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

हमारा किरदार ग़ैरमुस्लिमों में.....6

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

हिन्दुस्तानी मुसलमानों के लिए सही राहे अमल.....8

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

तक़्वा क्या है?.....10

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तलबीस-ए-इब्लीस.....12

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

तलाक़ के चंद मसाएल.....14

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

ख़ुदा है मुहब्बत, मुहब्बत ख़ुदा है.....16

मुहम्मद ज़ाहिद हुसैन नदवी जमशेदपुरी

न्यायपॉलिका के शरीअत विरोधी फ़ैसले तथा मुस्लिम बुद्धिजीवियों की ज़िम्मेदारी .....17

सैय्यद मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

मुल्क की सुलगती सूरतेहाल और हमारी ज़िम्मेदारी.....19

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूँनी नदवी

सम्पादकीय

# मुल्क के सच्चे ख़ैरख़्वाहों से मुख़्लिसाना अपील

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

हिन्दुस्तान में एक लम्बे अर्से तक ब्रिटेन ने हुक्मरानी की और यहां की आबादी को गुलाम बनाकर रखा। फिर बीसियों साल की मुसलसल मेहनत और कुर्बानी के नतीजे में यह मुल्क आज़ाद हुआ। कुर्बानियां मुसलमानों ने भी दीं और हिन्दुओं ने भी दीं, लेकिन आज़ादी का सूर सबसे पहले मुसलमानों ने फूंका। इसकी अमली कोशिश का आग़ाज़ मुसलमानों ने किया और हिन्दू भाईयों को शरीक करके आज़ादी के लिए लड़ाई शुरू की। गांधी जी को मैदान में लाने वाले मौलाना मुहम्मद अली जौहर (रह0) थे। शुरू से आख़िर तक हिन्दुओं और मुसलमानों ने मिलकर सबकुछ किया। यह इत्तिहाद ही की ताक़त थी कि अंग्रेज़ों को मुल्क छोड़ना पड़ा, लेकिन उन्होंने जाते–जाते मुल्क में ऐसे बीज डाल दिये कि यह मुल्क आपस के झगड़ों में उलझा रहे और इसकी अन्दरूनी सलाहियतें बेकार होती रहीं और अजीब बात यह है कि बहुत से सादा मिज़ाज अंग्रेज़ भी इस साज़िश का शिकार हो गए।

अंग्रेज़ लेखकों ने इसको माना है कि हिन्दुओं और मुसलमानों को आपस में लड़ाने के लिए उन्होंने कैसी–कैसी साज़िशें कीं। एक अंग्रेज़ लेखक ने यहां तक लिखा है कि हमने तारीख़ में ऐसा मवाद दाख़िल कर दिया है कि हिन्दु–मुसलमान अब कभी मिल नहीं सकते, इसका नतीजा यह हुआ कि आज़ादी के फ़ौरन बाद ही मुल्क को तक़सीम होना पड़ा और इसी एक मुल्क के रहने वालों ने इस तरह एक–दूसरे का ख़ून बहाया जो यहां की हज़ारों साल की तारीख़ में एक निहायत बदनुमा धब्बा है। अजीब बात है कि यह सब हुआ और यह कितने लोगों ने सोचा कि नुक़सान किसका हो रहा है और फ़ायदा कौन उठा रहा है? हिन्दुस्तान को लूटकर ले जाने वालों ने अपने नुमाइन्दे ऐसे बिठा दिये कि आजतक मुल्क की चूल नहीं बैठ सकी, किसी भी मुल्क के लिए इन्तिहाई ख़तरनाक बात यह है कि वहां के रहने वालों में एक–दूसरे पर एतमाद ख़त्म हो जाए और एक–दूसरे को दुश्मनी की नज़र से देखा जाने लगे। इसके नतीजे में ऐसा झगड़ा पैदा होता है कि संभाले नहीं संभलता, आज़ादी के बाद से ही झगड़े का जो माहौल अंग्रेज़ों की तरफ़ से एक सोची–समझी साज़िश के नतीजे में पैदा हुआ था, उस पर लोग ध्यान नहीं देते। जब तक झगड़े की जड़ ख़त्म नहीं की जाएगी, उस वक़्त तक हालात की बेहतरी आसान नहीं है।

इस वक़्त तो सूरतेहाल यह है कि एक ख़ास ज़हनियत (विचारधारा) के लोग तथाकथित हिन्दुत्व के नाम पर नफ़रत का बाज़ार गर्म कर रहे हैं, मानो वह यह चाहते हैं कि हिन्दुओं की अक्सरियत अगर मुसलमानों से नफ़रत करने लगी तो वह उनके वोटबैंक में इज़ाफ़ा करेगी। इसलिए इस तरह के लोग जगह–जगह नफ़रत की आग भड़काना चाहते हैं। जगह–जगह फ़साद कराते हैं जिसमें दरिन्दगी की इन्तिहाई शक्लें अपनाई जाती है, जिनसे इन्सानियत का सर शर्म से नीचा हो जाए। फ़साद ज़ाहिर है हर जगह नहीं होते और हमेशा नहीं होते, लेकिन जब तक नफ़रत की जड़ें मौजूद हैं, इसकी कोई ज़मानत नहीं कि किसको कहां दौरा पड़ जाए और फिर पड़ोसी–पड़ोसी का गला काटे और इन्सानियत शर्मसार होकर रह जाए।

मुल्क के सच्चे ख़ैरख़्वाहों को इसके लिए उठना पड़ेगा और अन्दर से हालात का जाएज़ा लेकर नुफ़रत की जड़ों को ख़त्म करना होगा। जब एतमाद (विश्वास) की फ़िज़ा बहाल होगी और सबकी सलाहियतें मुल्क की तरक़्क़ी के लिए ख़र्च होंगी तो कुछ बईद नहीं कि यह मुल्क दुनिया के मन्ज़रनामें पर सबसे बड़ी ताक़त बनकर उभरे और दुनिया को इससे अख़्लाक़ी सबक़ भी हासिल हो।

# मुल्क के मसलों में तीन चीज़ें फ़ौरी तवज्जो की मुस्तहिक़

मुफ़क्किर-ए-इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

हमारे इस देश के बचाव, तरक़्क़ी, इज़्ज़त व इस्तहकाम और इसका मुआसिर दुनिया और उसके ख़तरनाक व पेचीदा व आलमी सूरतेहाल में अपना शायाने शान किरदार अदा करने के लिए सही, महफ़ूज़, बाइज़्ज़त और बेख़तर रास्ता वही है जो तहरीके आज़ादी के मुख़्लिस दानिशवर और बुलन्द क़ामत व क़ीमत रहनुमाओं पण्डित जवाहर लाल नेहरू, मौलाना आज़ाद और उनके साथियों ने तजवीज़ किया था और वह सच्चे सेक्यूलरिज़्म, सही जम्हूरियत और हिन्दु–मुस्लिम इत्तिहाद का रास्ता है, चाहे जितना लम्बा और मुश्किल हो। इसके अलावा जो रास्ता तजवीज़ किया जाएगा, उससे ख़्वाह आरज़ी व वक़्ती तौर पर कामयाबी हासिल हो, मुल्क के लिए तबाहकुन और कुर्बानियों पर पानी फेरने वाला है जो जंगे आज़ादी में अमल में आईं और मुल्क को ऐसी मुश्किलात व मसाएल से दो–चार करने वाला है जिनका कोई हल नहीं है।

पहली चीज़ जिसको मैं मज़हब, इन्सानी तारीख़, फ़लसफ़ा और अख़्लाक़ का एक तालिब इल्म होने के नाते अर्ज़ करना चाहता हूं और मुझे अंदेशा है कि शायद दूसरा शख़्स जिस पर सियासी तर्ज़े फ़िक्र ग़ालिब है न कहेगा, वह यह कि इस मुल्क के लिए दो ख़तरे बड़े तश्वीशनाक हैं; एक ज़ुल्म व तश्द्दुद का रूझान, इन्सानी जान व माल और इज़्ज़त व आबरू की बेक़ीमती (चाहे उसका ताल्लुक़ किसी फ़िरक़े से हो) जिसका ज़हूर फ़िरक़ावाराना फ़साद, तबक़ाती ऊंच–नीच की बिना पर पूरे–पूरे ख़ानदानों और मुहल्लों को सफ़ाई, थोड़े से माली फ़ायदे के लिए इन्सान की जान ले लेना, सफ़ाकाना जराएम और मज़ालिम की कसरत!

जो लोग मज़हब पर यक़ीन रखते हैं, उनके लिए तो यह समझना बहुत आसान है कि इस कायनात का पैदा करने वाला और चलाने वाला जो माँ से ज़्यादा मुहब्बत करने वाला और मेहरबान है, इस अमल से ख़ुश नहीं हो सकता और इसको ज़्यादा दिन बर्दाश्त नहीं करेगा और इसके नतीजे में हज़ारों कोशिशों और क़ाबिलियतों के बावजूद कोई मुल्क पनप नहीं सकता और वह मुआशरा ज़्यादा दिन बाक़ी नहीं रह सकता लेकिन जो लोग मज़हब पर एतमाद नहीं रखते, वह इस तारीख़ी हक़ीक़त से वाक़िफ़ हैं कि इससे कम दर्जे के ज़ुल्म और ज़्यादती की वजह से बड़ी बड़ी शंहशाहियां और वह तहज़ीबें जिनका किसी ज़माने में डंका बजता था और आज भी तारीख़ व अदब के सफ़हात पर उनके रौशन नुक़ूश हैं, ज़वाल का शिकार हो गईं और पुरानी दास्तान बनकर रह गईं। इस सूरतेहाल में ख़िलाफ़े तूफ़ान मुहिम चलाने की ज़रूरत है। इसके लिए गांव–गांव, मुहल्ला–मुहल्ला जाने की ज़रूरत है, सख़्त क़ानून, इबरतनाक सज़ाओं, इब्लाग़े आम्मा (मीडिया) के ज़राए से काम लेने और इन्तिज़ामिया को सख़्त से सख़्त क़दम उठाने की ज़रूरत है, वरना "न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी।"

दूसरी चीज़ हिन्दू अहयाइयत की तहरीक, हिन्दू परिषद, शिवसेना, आर एस एस और फ़िरक़ा परस्ती की जारिहियत व तश्द्दुद के खुले रूझानात के सिलसिले में अदना सी रिआयत, लचक और नर्मी है, जिससे वक़्ती तौर पर ख़्वाह कुछ फ़ायदा पहुंच जाए या परेशानी से बचा जा सके, मुल्क को ज़मीदोज़ और धमाकाखेज़ सुरंगों के रहम व करम पर छोड़ देना है, जो आख़िरकार मुल्क को ले डूबेगी, गांधी जी इस हक़ीक़त को ख़ूब समझते थे कि फ़िरक़ावाराना नफ़रत, तश्द्दुद और जारिहियत, पहले मुल्क की आबादी के दो अहम उन्सुरों (हिन्दु व मुस्लिम फ़िरक़ों) के दरमियान अपना काम करेगी, फिर यही ज़ेली मज़हबी इख़्तिलाफ़ात, तबक़ात और बिरादरियों की सफ़ आराई और नस्ली व लसानी, सूबाई व इलाक़ाई तास्सुबात की शक्ल में ज़ाहिर होगी और जब यह काम भी ख़त्म हो जाएगा तो वह आग की तरह (जब उसको जलाने के लिए ईंधन न मिले तो अपने को खाने

लगती है) मुल्क और अमनपसंद शहरियों को अपना लुक़्मा बना लेगी और यह मुल्क तबाह होकर रह जाएगा। मुतालबात और इस पर तन्क़ीद का सिलसिला, अपने को बिल्कुल बदल देने और अपने मिल्ली व तहज़ीबी ख़ासियत से दस्त बरदार हो जाने की लगातार मांग, सैकड़ों और हज़ारों बरस की सोई हुई बल्कि मरी हुई तारीख़ को दोबारा जगाना और ज़िन्दा करना, जो तब्दीलियां सदियों पहले (अच्दी या बुरी) हुईं और उनको इस मुल्क के हक़ीक़त पसंद, फ़र्राख़ दिल और ग़ैरतमंद शहरियों ने सदियों गवारा किया, उनके सफ़र को पहले क़दम से शुरू करना और उनकी तलाफ़ी की कोशिश, इस मुल्क को उन नए मसाएल व मुश्किलात से दो–चार करेगी जिनका मुक़ाबला करने की इस मुल्क को न फ़ुरसत है न ज़रूरत और इस तरह हुकूमत, इन्तिज़ामिया और दानिशवर तबक़े की तवानाई बेमहल सर्फ़ होगी, जिसकी मुल्क को अपने तामीरी कामों, सालिमियत व इस्तहकाम में ज़रूरत है, इसलिए इस शिगाफ़ को जबकि वह मामूली तवज्जो और मसाले से बन्द हो सकता है, इससे बेशतर बन्द कर दिया जाए, जब वह हाथियों से भी बन्द नहीं हो सकेगा, मुल्क के इस उमूमी व बुनियादी मफ़ाद की ख़ातिर किसी की नाराज़गी या इलेक्शन के नताएज पर असर पड़ने या किसी रियासती व मक़ामी इन्तिज़ामिया की नागवारी का ख़्याल नहीं करना नहीं चाहिए कि मुल्क इन सब चीज़ों से ज़्यादा अज़ीज़ और उसूल, मुसालेह व फ़वाएद पर मुक़द्दम है और यह महज़ उसूल पसंदी ही का तक़ाज़ा नहीं है, दूरबीन, हक़ीक़त पसंद और गहरी सियासत का भी तक़ाज़ा है।

तीसरी चीज़ जो फ़ौरी तवज्जो की मुस्तहिक़ और तश्वीश का बाइस है, वह अख़्लाक़ी व इन्तिज़ामी इन्तिशार है जो इस हद तक पहुंच गया है जिसकी नज़ीर कम से कम मुझे इस मुल्क की तारीख़ में इससे पहले नहीं मिली, आप इस सिलसिले में सरकारी रिपोर्टों और मुल्क के नज़्म व नस्क़ की ज़ाहिरी टीप–टॉप और तरक़्क़ी को न देखिए, आम शहरियों, मुतवस्सित दर्जे के आदमियों उन लोगों से पूछिये जिनका अदालतों, दफ़्तरों, रेलवे, हवाई सर्विस, पुलिस, थानों, टेलीफ़ोन, अस्पतालों, सरकारी ठेकों और ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ शोबों से काम पड़ता रहता है, रिवश्त के बग़ैर अदना दर्जे का काम नहीं हो सकता, पैसे के ज़रिये हर काम कराया जा सकता है, हर मुजरिम को छुड़ाया जा सकता है, हर शरीफ़ इन्सान को फांसा जा सकता है, हर तरह का ग़लत फ़ैसला हासिल किया जा सकता है, हर जगह फ़साद कराया जा सकता है, यहां तक कि मुल्क के राज़ बेचे जा सकते हैं, दवाओं और गिज़ाओं में मिलावट हो रही है, मरीज़ों के लिए जो इन्तिज़ामात हैं वह बेकार जा रहे हैं। संगदिली अपनी इन्तिहा को पहुंच चुकी है। रेलवे, हवाई सर्विस में रिश्वत की गर्मबाज़ारी से हुकूमत को रोज़ाना लाखों–करोड़ों रुपये का नुक़सान हो रहा है। इस सबकी जड़ में पैसे की हद से बढ़ी हुई मुहब्बत, ख़ुदा का ख़ौफ़ दिल से निकल जाना और इन्सान से हमदर्दी, मुल्क से वफ़ादारी और उसके मफ़ाद को तरजीह देने और उसके नुक़सान का ख़्याल रखने के जज़्बे का ख़त्म हो जाना है, ऐसी सूरत में मुल्क सिनअती तौर पर, सियासी तौर पर और ख़ारजी ताल्लुक़ात की बुनियाद पर, तरक़्क़ी और तालीम की इशाअत और ख़्वान्दगी का तनासुब बढ़ जाने के बावजूद तेज़ी से ज़वाल की तरफ़ जा रहा है, लोग ज़िन्दगी से आजिज़ हैं और आख़िरी शर्म और नाकामी की बात यह है कि अंग्रेज़ों के दौरे गुलामी को याद करते हैं और उसकी तमन्ना करते हैं, जब इन्तिज़ामिया चौकस थी, रेलें वक़्त पर चलती और पहुंचती थीं, हस्पताल इत्मिनान व ख़ुशी और ख़िदमत व राहत के ठिकाने थे, तक़र्ररियां और तरक़्क़ियां क़ाबिलियत और इस्तहक़ाक़ की बिना पर होती थीं, अब यह सब चीज़ें ख़्वाब व ख़्याल हो गईं।

यह तीन चीज़ें फ़ौरी तवज्जो की मुस्तहिक़ हैं और उन्हीं की बुनियाद पर मुस्तहकम और देरपा हुकूमत क़ायम हो सकती है, इस सिलसिले में इतना अर्ज़ करता चलूं कि इसमें तरीक़े इन्तिख़ाब, वोटर्स को हर हाल में ख़ुश रखने, हल्क़हाए इन्तिख़ाब के नुमाइन्दों की हर बात मानने, पार्ल्यामेंट और असेम्बली के मेम्बरान को हर तरह की ऐसी रिआयत देने को ख़ास दख़ल है कि वह जो ग़लत काम करा सकें, उनको खुली छूट है और पार्ल्यामेंट की मेम्बर एक ऐसी सोने की चिड़िया या क़दीम ज़माने का अफ़सानवी परिन्दा "हुमा" है कि जिसके सर पर बैठ जाए उसको बादशाही मिल जाए।

(कारवाने ज़िन्दगीः 3/84–89)

# हमारा किरदार ग़ैरमुस्लिमों में

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (रह0)

पन्द्रहवीं सदी के आग़ाज़ पर बहुत से अहले फ़िक्र मुसलमानों ने यह ख़्याल ज़ाहिर किया कि यह सदी इस्लाम की होगी, यानि इसमें मुसलमान क़ौमों को फ़रोग़ हासिल होगा और मुसलमान उभरकर दूसरी क़ौमों के मुक़ाबले में उठेंगे और अज़ीम ताक़त बनेंगे।

इस ख़्याल के लोगों के सामने दुनिया में मुसलमानों की बढ़ती हुई तादाद, जगह–जगह नवजवान मुस्लिम ताक़तों का ज़ोर और दुनिया के बहुत से हिस्सों में सबकी तवज्जे मुसलमानों पर मरकूज़ हो जाना था। इन बातों को उन्होंने मुसलमानों के शानदार मुस्तक़बिल की अलामत महसूस किया।

उनका ख़्याल कहां तक सही है इसको तो मुस्तक़बिल बताएगा, बाक़ी यह ज़रूर है कि हमको आलमे इस्लाम के अन्दर मुसलमानों की रोज़ अफ़्ज़ूं बेदारी का जाएज़ा लेते रहना चाहिए और इसमें अच्छे पहलुओं से हौसला और उमंग हासिल करना चाहिए और ग़लतियों के हामिल पहलुओं से सबक़ लेना चाहिए और अपनी हिकमते अमली में उनसे बचने की सूरत शामिल करना चाहिए।

मुसलमानों की इज्तिमाई ज़िन्दगी, दावत के अमल और जिहाद के अमल पर मुश्तमिल है और दोनों के लिए जनाब रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की हयाते तैय्यबा से पूरी रोशनी मिलती है और उसी से रहनुमाई और ताक़त हासिल करना है। अपने ज़ाति रूझान पर नहीं लेकिन आम तौर पर यह होता है कि ग़ैरों से हमको जो तकलीफ़ें पहुंचीं और ताक़तवर दुश्मनों से जो तकलीफ़ें पहुंचीं, उन्होंने हममें एक रद्दअमल पैदा कर दिया जो इन्तिक़ामी जज़्बे की सूरत में जगह–जगह ज़ाहिर हो रहा है। इन्तिक़ाम लेना हर मज़लूम का हक़ है और अगर मज़लूम में इन्तिक़ामी कैफ़ियत पैदा हुई तो उसके इस तर्ज़े अमल को बग़ावत की बात समझी जाएगी और मज़लूम को इस्लाम की तरफ़ से इन्तिक़ाम का पूरा हक़ दिया गया है, लेकिन उसके साथ यह सही नहीं कि इन्तिक़ामी जज़्बे में ख़ताकार और बेख़ताकार का फ़र्क़ न किया जाए और ज़ालिम से ग़ुस्सा होकर उससे ताल्लुक़ रखने वाले ऐसे शख़्स पर भी ग़ुस्सा उतार दिया जाए जिसने ज़ुल्म नहीं किया, फिर यह देखना अक़्ल की बात है कि इन्तिक़ाम ले लेने और ग़ुस्सा उतार लेने के अलावा कोई भी दूसरी बात नफ़ाबख़्श हो सकती हो तो उस पर भी ग़ौर किया जाए और अख़्तियार करने के लायक़ हो तो अख़्तियार किया जाए और ज़ालिम का मुताला किया जाए और यह देखने की कोशिश की जाए कि उसके ज़ुल्म के पीछे कोई ऐसा सबब तो नहीं जिसका ताल्लुक़ हमारी किसी ग़लती या कमज़ोरी से हो।

अल्लाह के आख़िरी नबी मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने दीन का काम दावत से शुरू किया ओर दावत में अल्लाह तआला की रूबुबियत और वहदानियत को तस्लीम कराया और बन्दगी के तक़ाज़े पूरा करने के साथ–साथ आम इन्सानी हमदर्दी और मकारिमे अख़्लाक़ को तरीक़ा बनाया। यही वजह थी कि लोगों को आपकी दावत से इख़्तिलाफ़ बल्कि मुख़ालिफ़त के बावजूद आपसे हमदर्दी थी जो आपको अमानतदार, सच्चा और नेक तबियत समझने के वाक़्यात से ज़ाहिर है। अबूजहल ने आपको एक बार सख़्त ज़बानी से तकलीफ़ पहुंचाई, आपने मौक़ा ऐसा महसूस किया सख़्त अल्फ़ाज़ इस्तेमाल फ़रमाए, आपने फ़रमाया कि मैं वह बात लाया हूं कि जिसके ज़रिये तुम लोग कटोगे, इस पर लोग यह कहने लगेः मुहम्मद साहब आपतो नादुरुस्त और नागवार रवैया अख़्तियार नहीं किया करते थे, यानि दुश्मनों ने शहादत दी कि आपका रवैया आम तौर पर सब्र का रहा।

आप (स0अ0व0) जहां नर्म और मुतहम्मिल थे कि आपके दुश्मन भी यह कहें कि आप ऐसा सख़्त रवैया अख़्तियार नहीं करते थे, वहां यह बात भी थी कि जिहाद व क़िताल का मौक़ा आया तो आपने अपने हाथ से भी ज़र्बो क़िताल किये और इसमें कोई ढीलापन नहीं अख़्तियार किया। आपकी मक्की ज़िन्दगी अपना अलग रंग रखती है और मदनी ज़िन्दगी अलग रंग और दोनों में

कभी–कभी वह लम्हे भी आए जिसमें तरीक़ा अलग हो जाता था। यह सब वक़्त की नज़ाकत का लिहाज़ रखते हुए और मक़सद पर नज़र रखने की वजह से होता था, इसीलिए ताएफ़ जब आप हमदर्दी हासिल करने के लिए तश्रीफ़ ले गए और वहां हमदर्दी नहीं मिली, बल्कि निहायत ग़ैरइन्सानी तरीक़े से आपको मायूस किया गया और तकलीफ़ पहुंचाई गई तो इस पर अल्लाह तआला की रहमत जोश में आई और एक फ़रिश्ता भेजा गया कि आप कहें तो पहाड़ों के दरमियान यह रहते हैं, पहाड़ों से दबा दिये जाएं, आपने दुखे दिल के बावजूद यह फ़रमाया कि नहीं! अगर यह नहीं तो इनकी औलाद इस्लाम कुबूल कर लेगी।

हम अगर मुसलमानों के दरमियान रह रहे हैं, तो हमारी क्या ज़िम्मेदारी है और अगर ग़ैर मुस्लिमों के दरमियान रह रहे हैं तो हमारी क्या ज़िम्मेदारी है? रवादारी बरतने के हालात कौन से हैं और इन्तिक़ामी जज़्बा अख़्तियार करने के कौन से हैं? फिर यह देखना कि महज़ दुश्मन की शरपसंदी से हालात में ख़राबी है या हमारी कोताही और लापरवाही का भी दख़ल है, इन बातों पर नज़र रखते हुए अमल का तरीक़ा अख़्तियार करना समझदारी है।

इन बातों का हम इन्साफ़ के साथ जाएज़ा लें तो कम से कम हिन्दुस्तान के इस मुल्क में हमारी कोताही का भी अच्छा ख़ासा हिस्सा निकलेगा। हमने इस्लाम की तालीमात को वाज़ेह करने और मुसलमानों के इन्सानियत दोस्ती के किरदार का मुज़ाहिरा करने में बड़ी कोताही की है, इसका सुबूत यह है कि बाज़ वक़्त हमको अपने पड़ोस में कई–कई दहाई तक ग़ैरमुस्लिमों से वास्ता पड़ा है, लेकिन उनको यह तक नहीं मालूम होता कि इस्लाम में ग़ैरमुस्लिम के साथ क्या किरदार बताया गया है। उसको यह नहीं मालूम होता कि इस्लाम का मोटा–मोटा मतलब क्या है? उसके बरअक्स उसको मुसलमानों से ख़ौफ़ मालूम होता है, उसने सिर्फ़ यह सुना है कि मुसलमानों के इस्लाफ़ (पूर्वज) सिर्फ़ मार–धाड़ करते रहे और अब उनके यह अख़्लाफ़ (नाएब) भी कुछ ऐसे ही ख़तरनाक जज़्बात के लोग हैं, फिर उनके लीडर भी झूठी–सच्ची बातें बताकर उनको मुसलमानों से बिल्कुल मश्कूक बनाकर नफ़रत से दिल भर देते हैं। ऐसी सूरत में क्या हमारी यह ज़िम्मेदारी नहीं है कि हम अपने ग़ैरमुस्लिम पड़ोसियों को इस्लाम के मुताल्लिक़ और मुसलमानों के मुताल्लिक़ बताएं? उनकी सही तस्वीर उनके सामने रखें और उनके ज़हनों में इस्लाम के बारे में एक आला तस्वीर पैदा करने की कोशिश करें।

इस मुल्क में ग़ैरमुस्लिमों का इस्लाम के बारे में तसव्वुर सही करने की कोई सूरत नहीं रही, इस काम की तवज्जो कम से कमतर है। हिन्दुस्तान जैसे मुल्क में जिसमें अलग–अलग मज़हब की क़ौमें रहती हैं और मुसलमान अक़्लियत (अल्पसख्यक) में भी हैं, ग़ैरमुस्लिमों की इस्लाम व मुसलमान के बारे में जो ग़लत मालूमात है उनको दुरुस्त करने की कोशिश करना बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी है, यह काम दावत का भी है और दावत का काम दूसरे तमाम तरीक़ों पर मुक़द्दम और उनसे अफ़ज़ल है, इसके बाद दूसरे तरीक़े आते हैं, जिनको मौक़ा व ज़रूरत के एतबार से अख़्तियार किया जा सकता है।

इस वक़्त सूरतेहाल यह है कि एक तरफ़ तो मुसलमानों ने वह तमाम अख़्लाक़ी और इन्सानी कमज़ोरियां और बुराइयां अख़्तियार कर ली हैं जो ग़ैर मुस्लिमों में पाई जाती हैं और महज़ गिनती के लिहाज़ से मुसलमान होने पर यह तवक़्क़ो क़ायम किये हुए हैं कि ग़ैरमुस्लिमों से उनके सब इख़्तिलाफ़ात मारका–ए–हक़ व बातिल हैं और मुक़ाबला पड़ गया तो ग़ज़्वा–ए–बद्र जैसी मदद उनके लिए भी आएगी। इस वक़्त अफ़सोसनाक सूरतेहाल यह है कि हमारी सीरत व किरदार कमज़ोर, हमारी संजीदा कोशिश व जद्दोजहद नाक़िस, हमारी हिकमते अमली ग़ैरमुदब्बिराना, हमारे जज़्बात बेक़ाबू, हमारा अल्लाह से ताल्लुक़ मश्कूक और ग़ैरों में हमारा तसव्वुर ख़राब है। ऐसी सूरत में सिर्फ़ तलाक़ते लिसानी और गर्म लहजे और गर्म मुज़ाहिरों से कहां तक काम चल सकता है? हमारा काम संजीदगी के साथ मौक़ा की नज़ाकत का लिहाज़ करते हुए हिकमते अमली अख़्तियार करने, अपने किरदार को दुरुस्त करने और नर्म और गर्म दोनों मौक़ों के लिए हुज़ूर सैय्यदना मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की पाक ज़िन्दगी में इज्तिमाई ज़िन्दगी के अलग–अलग हालात से निपटने की जो सुन्नत रही है उसको अख़्तियार करने से ही चलेगा। इस हक़ीक़त को हमारे क़ायदीन को भी समझना है और आम मुसलमानों को भी समझना है। अल्लाह तआला हमको सही तौफ़ीक़ दे। आमीन या रब्बुल आलमीन!

**(मुस्लिम समाज; ज़िम्मेदारियां और तक़ाज़े: 143–147)**

# हिन्दुस्तानी मुसलमानों के लिए सही रहे अमल

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

आप मुत्तफ़िक़ हों या न हों लोगों का तो ख़्याल है कि गर्म तक़रीरों और जज़्बाती बयानों से मसले हल होते नहीं बिगड़ते ज़रूर देखें हैं। यह माना कि सख़्त रद्दे अमल और चैलेंज भरा अंदाज़ सियासी लीडरों की अपनी मजबूरी होती है। इसी से उनकी लीडरी चमकती और उसी पर उनकी वाह–वाह होती है। यह तस्लीम कि कभी–कभी और कहीं–कहीं सख़्त लहजा और धमकी भरा रवैया अपनाने की ज़रूरत पड़ती है, लेकिन यह भी तो सच है कि हर जगह और हर वक़्त इस लहजे में बात करना, अपनी बात के असर को ज़ाएल करना, अपने क़द को छोटा करना और अपने वज़न को हल्का करना है।

यह बात भी कुछ अजीब सी है कि हमारे बाज़ लीडर जो मुस्लिम अक्सरियती (बहुसंख्यक) इलाक़े में एक महफ़ूज जगह रहते हैं। वह अक्सर उन मुसलमानों को भूल जाते हैं जो ग़ैर मुस्लिम इलाक़ों में ग़ैर महफ़ूज़ जगह बसते हैं और हवा के गर्म झोकों से कुछ ज़्यादा ही मुतास्सिर होते हैं, गर्म मिज़ाज लीडरों को बिरादराने वतन को चैलेंज देने और अरबाबे हुकूमत को फटकार लगाने से पहले यह ज़रूर सोच लेना चाहिए कि उनके इस चैलेंज और उनकी इस फटकार का असर उन इलाक़ों में क्या पड़ेगा जहां उनके भाई अक़्लियत (अल्पसंख्यक) में भी हैं और चारों तरफ़ से घिरे हुए भी। महफ़ूज क़िलों में रहने वालों को कुछ न कुछ ख़्याल झोंपड़ियों में रहने वालों का भी करना चाहिए, सिर्फ़ मज़े की ख़ातिर बारिश की दुआ करने से पहले, टपकती छत वालों की बेचारगी पर भी नज़र डाल लेनी चाहिए।

हिन्दु इन्तिहापसंद (अतिवादी) लीडर अगर एक तरफ़ आग उगल रहे हैं तो दूसरी तरफ़ हमारे बहुत से गर्म मिज़ाज क़ायदीन उस आग पर नफ़रत का तेल छिड़क कर उन भड़कते हुए शोलों को आसमान तक पहुंचाने का काम कर रहे हैं। नफ़रत की आग जब लगती है तो अक्सरियत के लिए नहीं सिर्फ़ अक़्लियत के लिए ही तबाहकुन होती है। इसकी एक नहीं सैकड़ों मिसालें मौजूद हैं लेकिन लोगों का हाल यह है कि अगर आप उनसे इस तरह की तक़रीरों के मन्फ़ी (नकारात्मक) असर पर बात करेंगे तो वह यही कहेंगे कि फिर बुज़दिलों की तरह सुनते रहिए, ऐसे लोगों से सिर्फ़ यही कहा जा सकता है कि बहादुर बनकर पिटने से बेहतर है कि बुज़दिल बनकर सुन लिया जाए। बात अगरचे पुरानी है, लेकिन बरमहल है, बाबरी मस्जिद का मसला चल रहा था, बाराबन्की में इस तरह के बहुत से गर्म मिज़ाज, पुरजोश तक़रीर करने वालों ने अपनी शोलाबयानी से माहौल में इतनी गर्मी पैदा कर दी कि एक बड़ा फ़साद हो गया, पुलिस फ़ायरिंग में कई मुसलमान शहीद हो गए। उस रात मौलाना अली मियाँ (रह0) दिल्ली जा रहे थे। गर्म मुक़र्रिरों का वही टोला स्टेशन पहुंचा और जाकर मौलाना अली मियाँ (रह0) बहादुरों की तरह नहीं बुज़दिलों की तरह फ़रियाद की कि हुकूमत पर दबाव डालकर पुलिस एक्शन को रुकवाइए, मौलाना ने उस वक़्त जो जुम्ला उनसे कहा, वह भी सुन लीजिए, मौलाना ने कहाः

"दूसरों को तो आपने शहीद करवा दिया, ख़ुद शहीद नहीं हुए?"

तारीख़ से बहुत कुछ सीखा जा सकता है, बशर्ते कि तारीख़ का मुताला सीखने के इरादे से किया जाए और इससे नतीजे निकालने की कोशिश की जाए। आज से 1400 साल पहले जबकि ख़ुश्क पहाडों से घिरे मक्का नामी शहर में एक अक़्लियत थी, सिर्फ़ चार लोगों पर मुश्तमिल, उनमें भी एक ख़ातून और एक नौ उम्र बच्चा, इस चार नफ़री अक़्लियत से मुख़्तलिफ़ क़बीलों पर मुश्तमिल वहां की अक्सरियत को जो दुश्मनी और

नफ़रत थी इस दुश्मनी और नफ़रत का दसवां हिस्सा भी आज किसी भी मुल्क में किसी भी अक़्लियत और अक्सरियत के दरमियान नहीं पाया जाता, लेकिन चन्द ही साल गुज़रे थे कि वह अक़्लियत अक्सरियत में बदल गई और ऐसी बदली कि फिर वहां कोई अक़्लियत ही न रही, कल तक जहां सद फ़ीसद कुफ़्र था, आज वहां सौ फ़ीसद इस्लाम है।

क्या मक्का के इस अक़्लियत के तर्जुबे को आज दोहराया नहीं जा सकता? क्या दुश्मनी का जवाब दोस्ती से, नफ़रत का मुहब्बत से, बदअख़्लाक़ी का हुस्ने अख़्लाक़ से, झूठ का सच से, सख़्ती का नर्मी से, आग का पानी से, इन्तिहा पसंदी का एतदाल पसंदी से, जोश का होश से, हक़ तलफ़ी का हक़ की अदायगी से, कड़वे बोल का मीठे बोल से नहीं दिया जा सकता? यू तो हम कहते रहते हैं कि हमारे लिए नमूना सिर्फ़ हमारे नबी (स0अ0व0) हैं और हमारे नबी के सहाबा (रह0) हैं, लेकिन क्या हम इन नमूनों को अपनाने की कोई कोशिश करते हैं?

हमारे नबी (स0अ0व0) ने दुश्मनों की दुश्मनी का जवाब कैसे दिया? क्या उसी तरह जिस तरह हम दे रहे हैं? आप (स0अ0व0) तो अपने दुश्मनों के लिए भी तड़पते थे, इन्तिक़ाम के लिए नहीं हिदायत के लिए, ज़ेर करने के लिए नहीं क़रीब करने के लिए, तोड़ने के लिए नहीं जोड़ने के लिए, आज ज़रूरत उसी नबवी बेक़रारी को पैदा करने और उसी मुहम्मदी तड़प को दिलों में उतारने की है।

ग़लतफ़हमियां दूर करने, बदगुमानियां ख़त्म करने, दिलों में अपने अख़्लाक़ से जगह बनाने और वतन और अहले वतन के लिए अपनी ख़ैरख़्वाही का यक़ीन दिलाने का मौक़ा पार्ल्यामेंट के सेशन से बेहतर कोई मौक़ा नहीं, बशर्ते कि हमारे क़ायदीन थोड़ा सा यह ख़्याल कर लें कि वह अपनी पार्टी के मफ़ादों का ख़्याल रखना, उसके एजेन्डे के मुताबिक़ काम करना और अपनी सियासी मस्लहतों को पेश नज़र रखना है, वहीं उनकी ज़िम्मेदारी एक यह भी है कि उनके इस्लामी अख़्लाक़, इस्लामी किरदार और इस्लामी गुफ़्तार का मौक़ा पेश करके इस्लाम के बारे में पायी जाने वाली बदगुमानियां और मुसलमानों के बारे में पैदा की जाने वाली ग़लतफ़हमियां भी दूर करनी हैं।

पार्ल्यामेंट में बरसरे इक़्तिदार पार्टी के मेम्बर भी होते हैं और बाल की खाल निकालने वाले अपोज़ीशन पार्टी के मेम्बर भी। इनमें से अक्सर इस्लाम और मुसलमानों से बिल्कुल नावाक़िफ़ होते हैं, न वह इस्लामी अक़ीदे के बारे में कुछ जानते हैं, न इस्लामी इबादतों के बारे में, इस्लामी अख़्लाक़ के बारे में कुछ इल्म रखते हैं, न इस्लामी मामलों के बारे में, वह कुरआन को रामायन की तरह एक किताब समझते हैं और नबी–ए–आख़िरुज़्ज़मां हज़रत मुहम्मद (स0अ0व0) को राम और कृष्ण की तरह एक अवतार, वह मस्जिद को मंदिर की तरह पूजा की एक जगह (स्थल) समझते हैं और नमाज़ को मंदिर में बजने वाले घंटे की तरह पूजा का एक तरीक़ा।

अब आप ही सोचिए! अगर पार्ल्यामेंट में इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ कोई क़ानून बनता है, अदालतों से कुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ कोई फ़ैसला आता है तो क्या इसमें हमारा कुसूर नहीं है? सैंकड़ों साल से इस मुल्क में रहते हुए और यहां के ग़ैर मुस्लिमों के साथ–साथ काम करते हुए हम आज तक उन्हें यह नहीं बता सके कि कुरआन क्या है? हदीस क्या है? नमाज़ क्या है? ज़कात क्या है? रोज़ा क्या है? हज क्या है? मस्जिद क्या है? अज़ान क्या है? निकाह क्या है? तलाक़ क्या है? विरासत क्या है? चार शादियों का मसला क्या है? दफ़नाने में हिकमत क्या है? ख़त्ना का फ़ायदा क्या है? पर्दे का मक़सद क्या है? दाढ़ी का मामला क्या है?!

याद रखें! हर मसले को सियासी रंग देना, फ़ौरन ही सड़कों पर ले आना, ज़िन्दाबाद–मुर्दाबाद के नारे लगाना, मुतालबे का वह तरीक़ा अपनाना जो सियासी पार्टियां अपनाया करती हैं, सूरतेहाल को और ख़राब कर देता है, जम्हूरी (लोकतान्त्रिक) मुल्क में जम्हूद (जनता) को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता, अगर हम सड़कों पर आंएगे और भीड़ इकट्ठा करके अपनी ताक़त का मुज़ाहिरा करेंगे तो दूसरे भी यही रास्ता अपनाएंगे और यह रास्ता अक़्लियत के लिए नुक़सानदेह और अक़्सरियत के लिए सूदमन्द साबित होगा, माज़ी में पेश आए वाक़्यात इसके शाहिद हैं।

# तक़्वा क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

### बख़ील की मिसाल:

"आप (स0अ0व0) ने यह बात इरशाद फ़रमाई कि बख़ील की मिसाल ऐसी है जैसे किसी के जिस्म के ऊपर ज़िरह हो और वह ज़िरह उसे जकड़े हुए हो। यानि जितना ज़्यादा वह शख़्स देना चाहता है, जो इरादा करता है, तो वह ज़िरह उसे और ज़्यादा जकड़ लेती है, फिर वह दे ही नहीं पाता, गोया जब उसे एक बार ज़िरह पहन ली, तो उसकी गिरहें जकड़ती चली जाती हैं और वह ऐसा जकड़ जाता है कि देना चाहे भी तो नहीं दे सकता। बिल्कुल इसी तरह जब आदमी दुनिया के हेर–फेर में फंसता है तो ऐसा फंसता है कि फंसता ही चला जाता है। फिर वह उसी धुन में रहता है कि किस तरह एक के दो, दो के तीन और सौ के पांच सौ रुपये पैदा करूं और उसको यह तौफ़ीक़ नहीं होती कि वह इस बात को समझे और इस हक़ीक़त को जाने कि अल्लाह तआला ने दुनिया को दारुल इम्तिहान (इम्तिहान की जगह) बनाया है। यह इम्तिहान का एक घर है। अल्लाह ने दुनिया इसलिए नहीं दी कि हम उसमें पूरी तरह मस्त हो जाएं, बेशक अल्लाह ने हमें इसकी इजाज़त दी है कि हम खाएं–पिएं और अच्छा लिबास पहने। अल्लाह के नबी (स0अ0व0) की मुबारक ज़िन्दगी में इसके नमूने मौजूद हैं, लेकिन ग़ौर करने की बात यह है कि इसमें ज़्यादती न हो, इसमें आदमी ऐसा न लग जाए कि उसे यह ख़्याल भी न रहे कि सही क्या है और ग़लत क्या है? हम कहां तक जा सकते हैं और कहां तक नहीं जा सकते हैं, यह समझ इन्तिहाई ज़रूरी है, अगर आदमी ने इसमें ग़ौर न किया और दुनिया में फंसता चला गया तो उसके बारे में बहुत ख़तरा है कि वह हक़ अदा न कर सकेगा और दुनिया के चक्कर में हलाक हो जाएगा।

### तवज्जो देने लायक़ तीन बातें:

"अल्लाह तुमको इसमें जांनशीन बनाएगा और देखेगा तुम कैसे अमल करते हो?"

हदीस शरीफ़ के इस टुकड़े से मालूम होता है कि अल्लाह तआला ने इस दुनिया में हमें इसलिए भेजा है ताकि वह देखे कि तुम इसमें क्या करते हो और दुनिया के बारे में तुम्हारा तर्ज़े अमल क्या है? यह दुनिया किस तरह हासिल की जा रही है? उसको कहां रखा जा रहा है और उसको कहां ख़र्च किया जा रहा है?

हक़ीक़त में इन तीनों बातों पर तवज्जो देने की ज़रूरत है। पहली यह कि माल व दौलत कहां से हासिल किया गया? ज़ाहिर है कि कल क़यामत के दिन इसका भी सवाल होगा कि तुमने जो माल व दौलत कमाया वह हलाल है या हराम? मुश्तबेह है या बिल्कुल पाक–साफ़?

दूसरी बात जिस पर तवज्जो देने की ज़रूरत है, वह यह कि आदमी ने अपने कमाए हुए पैसों को कहां रखा? यह भी बहुत अहम मसला है, कई बार ऐसा होता है कि इसको ग़लत तरीक़े पर रखा जाता है, याद रहे कि यह भी अल्लाह के यहां गिरफ़्त की बात है।

तीसरी अहम बात यह है कि आदमी ने उस पैसे को कहां ख़र्च किया? इस सिलसिले में आमतौर से आदमी यह सोचता है कि यह तो हमारा माल है, हम जहां चाहे ख़र्च करें, हम शादी में ख़र्च कर रहे हैं तो हमारी ही बेटी की शादी है, हमसे कौन पूछने वाला है, यह तो हम ही ने कमाया है। मगर आदमी यह भूल जाता है कि अल्लाह कुरआन के अन्दर साफ़ फ़रमाता है:

"(ऐ ईमान वालो) अल्लाह ने तुम्हें जो माल दिया है उसमें से उनको दे दो।"

इससे यह वज़ाहत हो गई कि अगर तुम यह समझते हो कि यह माल हमने कमाया है तो बहुत बड़े धोखे में

हो। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि तुमको यह अक़्ल अल्लाह ने दी, यह फ़हम अल्लाह ने दिया, यह बरकत अल्लाह ने दी, यह तौफ़ीक़ अल्लाह ने दी तब जाकर तुम्हें यह सबकुछ हासिल हुआ। वरना सोचने की बात है कि समाज में ऐसे बहुत से लोग होते हैं जो बड़े अक़्लमन्द व होशमन्द होते हैं और वह पैसा कमाने की सारी कोशिशें भी करते हैं, लेकिन उन्हें कुछ नहीं मिलता। जबकि उसी के मुक़ाबले में एक बेवकूफ़ क़िस्म का आदमी ज़रा सी मेहनत करता है तो उसके वारे–न्यारे हो जाते हैं। इससे यह पता चलता है कि अस्ल देने वाली ज़ात अल्लाह की है, इसलिए यह समझना कि हमारा माल व दौलत है, यह आदमी की सबसे बड़ी भूल है।

हदीस शरीफ़ में फ़रमाया गया:

"तो वह देखेगा कि तुम कैसे अमल करते हो।"

इससे पता चलता है कि आदमी कहां ख़र्च कर रहा है, इस पर भी तवज्जो देने की ज़रूरत है। इसलिए कि अल्लाह देखेगा कि तुम क्या करते हो। अगर तुमने शादी में दस लाख उड़ा दिये, तो अल्लाह के यहां पकड़े जाओगे। यह मत समझना कि मेरा माल है और मेरी बेटी की शादी है तो मैं जो चाहूं वह करूं, बल्कि यह भी सोचो कि अल्लाह के नबी (स0अ0व0) ने ज़िन्दगी के क्या आदाब बयान फ़रमाए हैं।

आज हालत यह है कि अगर आदमी अपना घर बनाने पर आए तो वह ऐसा मकान बनाने लगे कि क़ारून व शद्दाद को भूल जाए और गाड़ियों पर गाड़ियां ख़रीदना शुरू कर दे। इस वक़्त तो आपस में मुक़ाबला शुरू हो गया है। वह लोग जो बेचारे ग़रीब हैं, जिनको कमाने को नहीं है, वह भी जब मकान बनाने पर आएंगे तो ऊंचे से ऊंचा मकान बनाएंगे। हदीस में क़यामत की अलामतों का जहां तज़किरा है, वहां यह भी ज़िक्र है कि:

"वह इमारतें बनाने में मुक़ाबला करते हैं।"

यानि क़यामत क़रीब लोगों का हाल यह होगा कि वह नंगे पाँव और नंगे बदन जिनके पास कुछ नहीं होगा, वह भी कई बार बैंकों से लोन ले–ले कर पांच–पांच मंज़िला इमारते बनाएंगे और मुक़ाबला करेंगे। हमने एक जगह देखा कि लोगों ने मंज़िलें बनाने में मुक़ाबला किया। एक ने दो मंज़िला इमारत बनाई तो दूसरे ने तीन मंज़िला बनाई, फिर उसने चार मंज़िला बनाई तो उसने पांच मज़िला बनाई।

वाक़्या यह है कि यह दुनिया इन्सान को बाज़ मर्तबा बिल्कुल दीवाना कर देती है, लेकिन आदमी जब एक मर्तबा दाख़िल हो जाता है और इसमें फंस जाता है तो फिर उससे निकल नहीं पाता, फिर भी उसको बाद में शर्मिन्दगी होती है कि हम कहां दुनिया के चक्कर में पड़ गए।

### माद्दियत परस्ती (भौतिकवाद) की मनाही:

"तो दुनिया से बचो।"

यहां दुनिया के बारे में फूंक–फूंक कर क़दम रखो और जो कर रहे हो उसमें ख़ूब सोच–समझ कर फ़ैसला करो, दुनिया को तुम जो अख़्तियार कर रहे हो और बरत रहे हो तो सोच–समझ कर बरतो, ऐसा न हो कि तुम लज़्ज़त ही लज़्ज़त और राहत ही राहत और ऐश ही ऐश देखते चले जाओ और यह न सोचो कि हम ज़्यादती कर रहे हैं या कमी कर रहे हैं? सही कर रहे हैं या ग़लत कर रहे हैं?

सच्ची बात यह है कि यह बड़ी ख़तरनाक बात है, लेकिन आदमी इस पर नहीं करता, रमज़ान के ज़माने में ऐसा बहुत होता है कि इफ़्तार के लिए दसियों क़ीमती से क़ीमती चीज़ें तैयार होती हैं, मगर हमें यह नहीं मालूम होता कि हमारे पड़ोसी का हाल क्या है? कभी–कभी यह हालत होती है कि पड़ोसी के पास खजूर तक नहीं होती, तो अब ऐसी सूरत में सोचने की ज़रूरत है कि हमारा यह खाना दुरुस्त और जाएज़ है या नहीं? ज़ाहिर है कि हम यह तो दलील देंगे कि यह हमारी हलाल कमाई का है, हमने इसको तैयार किया है, तो इसमें कौन सी क़बाहत है? लेकिन हम यह भूल गए कि इसमें पड़ोसी का भी हक़ था, बेचारे हमारे पड़ोसी के पास खजूर और फुल्की भी नहीं है। इसके अलावा भी न जाने कितनी ऐसी चीज़ें हैं जिनपर आदमी ग़ौर नहीं करता और वह भूल जाता है कि दूसरे का क्या हक़ है? इसलिए आप (स0अ0व0) ने इरशाद फ़रमाया कि देखो! दुनिया इस्तेमाल करो मगर ख़ूब सोच–समझकर, ख़ूब लिहाज़ करके करो, फूंक–फूंक कर करो, ताकि तुमसे कोई ग़लती न हो।

# तलबीस–ए–इब्लीस

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

शैतान इन्सान को धीरे–धीरे बहकाता है, मानो क़दम–क़दम ले चलता है, इसीलिए कुरआन करीम में इरशाद हैः

"और शैतान के नक़्शेक़दम की पैरवी न करो।"

दो क़दमों के दरमियान फ़ासले को "खुत्वा" कहते हैं।

शैतान एक क़दम से ग़लत रास्ते को पेश नहीं करता, बल्कि वह धीरे–धीरे मुन्हरिफ़ करता है, यहां तक कि इन्सान को वही चीज़ अच्छी लगने लगती है। शीरा लगाने का वाक़्या सही या ग़लत जो भी मशहूर हो गया हो, लेकिन "खुत्वाते शैतान" की अच्छी तश्रीह है।

कुरआने करीम में दो मक़ामों पर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त ने खाने–पीने के तज़किरे के बाद शैतान की पैरवी से मना किया है। खाने–पीने की हिस्र हद से बढ़ जाए तो इन्सान में हर तरह की माली और अख़्लाक़ी ख़राबियां पैदा होती हैं। फिर इसमें बेग़ैरती पैदा हो जाती है और आख़िर में हलाल व हराम की तमीज़ भी उठ जाती है। ज़ाहिर है यह सब शैतान के खुत्वात हैं, उन पर इन्सान को चलाकर एक अच्छे–भले इन्सान को वह ग़ारत करके रख देता है।

इसी तरह शैतान माल की मुहब्बत बेपनाह दे करके इन्सान को कंजूस बनाता है और हर इन्फ़ाक़ के वक़्त फ़क़्र का ख़ौफ़ दिलाकर उसे बेतौफ़ीक़ इन्सान बनाना चाहता है, यह भी शैतानी खुत्वा है। इसी तरह नाम–ओ–नमूद और इस्राफ़ (फ़ुज़ूल ख़र्च) में मुब्तिला करके रियाकार बनाता है। कुरआन में बेवजह ख़र्च करने वालों को 'शैतान का भाई' कहा गया है।

"फ़ुज़ूल ख़र्च करने वाले शैतान के भाई हैं।"

और रियाकारी मुनाफ़िक़त की तरफ़ ले जाती है और शैतान का बड़ा क़दम है जिससे वह इब्नेआदम को गुमराह करता हैः

"जो अपने मालों को लोगों को दिखाने के लिए ख़र्च करते है, न अल्लाह पर ईमान रखते हैं, न आख़िरत के दिन पर, शैतान जिसका साथी बन गया तो बड़ा ही बुरा साथी बनता है।"

इस्राफ़, तब्ज़ीर, रियाकारी, तकब्बुर, हिस्र, बेग़ैरती यह सब शैतानी ख़ुत्वात में जो खाते–पीते लोगों को गुमराह करने के लिए शैतान इस्तेमाल करता है।

इन्सानों को बहकाने और राहे रास्त से हटाने के लिए शैतान जो हरबा अख़्तियार करता है वह यह भी है किः

"बिलाशुब्हा शैतान तुम्हें बुराई और फ़हाशी पर आमादा करता है और इस पर कि तुम अल्लाह प रवह बातें कहो जिनके बारे में तुम्हें कुछ इल्म नहीं है।"

बेहतरीन इन्सान वह है जो अक़ीदे का सच्चा, अख़्लाक़ का पाकीज़ा और आम मामलों में अफ़रात व तफ़रीत से पाक हो। शैतान के हमले इन ही तीन बुनियादों पर होते हैं, वह सबसे पहले बेएतदाली और नाहमवारी पैदा करता है। "अस्सूअ" यह हक़ीक़त में "अलहुस्न" की ज़िद है, शैतान बुराई पर आमादा करके कमालाते इन्सानी में ख़राबी पैदा करता है। यह इन्सान को गिराने की अव्वलीन कोशिश है। सही तरीक़े से माल कमाकर सही जगह ख़र्च करना इन्सानी कमाल है, लेकिन शैतान फ़क़्र का ख़ौफ़ दिलाकर कंजूस बनाता हैः

"शैतान तुम्हें फ़क्र का ख़ौफ़ दिलाता है।"

इसी तरह वह इस्राफ़ व तब्ज़ीर में मुब्तिला करके माल तबाह करता है:

"बेजा ख़र्च करने वाले शैतान के भाई हैं।"

कभी रियाकारी में मुब्तिला करके तसन्नोअ व तकब्बुर का मिज़ाज पैदा करता है:

"जो दिखावे के लिए ख़र्च करते हैं।"

आगे मज़कूर है कि:

"शैतान जिसका साथी बन गया तो बड़ा बुरा साथी बना।"

यह तमाम काम शैतान की पैदा की हुई नाहमवारियां हैं, जोश व जज़्बा इन्सानी कमाल है, लेकिन शैतान उसी जोश को गुस्से का रंग देकर बड़ी–बड़ी ख़राबियां पैदा करता है, इसीलिए "अलग़ज़ब मिनश्शैतान" कहा गया है। कभी जोश व जज़्बे को एतदाल से कम करके बेग़ैरती व बुज़दिली भी पैदा करता है:

"यह शैतान जो अपने औलिया में ख़ौफ़ पैदा करता है।"

बहरहाल शैतानी कोशिश यही होती है कि मोतदिल कामों में नाहमवारी पैदा की जाए और इन्सानों के काम सही तरीक़े से तकमील को न पहुंचें। यह "अस्सूअ" का मतलब है। इसके अलावा "अस्सूअ" हर ख़राबी और बुराई को कहते हैं, शैतान इन्सान को सबसे पहले आम बुराइयों पर आमादा करता है। उसमें इन्सान फंस जाए तो फिर सबसे बड़ी अख़्लाक़ी ख़राबी यानि बेहयाई और फ़ह्हाशी की तरफ़ क़दम बढ़ाता है, कुरआन ने इसी को "अलफ़हशाई" कहा है। कोई ग़लत काम जब ख़बासत में बहुत बढ़ जाए तो उस वक़्त उसे "अलफ़हश" "अलफ़हशाई" "अलफ़ाहिशह" कहा जाता है:

"कोई बात या काम कराहत अंगेज़ या घिन आमेज़ हो जाए तो उस वक़्त फ़हश बिलक़ौल या फ़हश बिलफ़ेल के अल्फ़ाज़ इस्तेमाल होते हैं।

# दीन की दावत और उसको करने का तरीक़ा

## हज़रत मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह०)

"अपने रब के रास्ते की तरफ़ हिकमत और अच्छी नसीहत के ज़रिये बुलाते रहिए।" (सूरह नह्ल: १५२)

आजकल लोगों ने सिर्फ़ सलाह व नसीहत और बयान व तक़रीर को दावत का ज़रिया समझ लिया है, जबकि अपने पालनहार की तरफ़ बुलाने के लिए हर चीज़ को हिदायत का ज़रिया बनाया जा सकता है। जैसे: सियासत, अख़्लाक़, हुस्ने सुलूक, मरीज़ों की अयादत, ग़रीबों–कमज़ोरों की मदद, ज़रूरतमन्दों की ज़रूरत पूरी करने में मदद वग़ैरह। हक़ीक़त में यह सब अल्लाह की तरफ़ बुलाने का ज़रिया है। सियासत के ज़रिये भी अल्लाह की दावत का काम लिया जा सकता है, लेकिन आजकल की सियासत अस्ल सियासत नहीं बल्कि यह सियासत तो फ़रेब, दग़ाबाज़ी, मक्कारी का फ़न बनकर रह गई है। ज़ाहिर है अस्ल इस्लामी दौर की सियासत और आज की सियासत में बड़ा फ़र्क़ है। आयते शरीफ़ा में दावत के लिए "हिकमत" की शर्त है, जिससे पता चलता है कि दावत देने वाले को नर्मी और मुहब्बत से बात करनी चाहिए। इसी तरह "माइज़े हस्ना" का भी ज़िक्र और मोइज़े हस्ना यह है कि आप इस तरह बात करें कि मुख़ातिब की आंख में आंसू और दिल में धड़कन पैदा हो जाए।

# तलाक़ के चंद मसाएल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

**तलाक़–ए–मोअल्लक़:**

अभी तक तलाक़ के जितने मसले बयान किये गए, उन सबका ताल्लुक़ तन्जीज़ी यानि फ़ौरी तलाक़ से था, कभी ऐसा होता है कि शौहर फ़ौरी तलाक़ नहीं देता बल्कि किसी शर्त के साथ मशरूत करके तलाक़ देता है, जैसे कि "अगर तुमने फ़लां से बात की तो तुम्हें तलाक़" इसको "तलाके मुअल्लक़" कहा जाता है, यानि तलाक़ के वाक़ेअ होने को किसी ख़ास काम के वाक़ेअ होने से मुअल्लक़ कर देना (जोड़ देना) क्योंकि इसमें शर्त और जज़ा होती है, लिहाज़ा यह क़सम खाने के हुक्म में होती है और जब तलाक़ को मुअल्लक़ करने के बाद शौहर चाहे तो अपने जुम्ले को वापस ले ले तो उसे उसका अख़्तियार नहीं रहता है। (शामी: 2/534)

**मिल्कियत होना या मिल्क की तरफ़ इज़ाफ़त होना शर्त है:**

तलाक़े मुअल्लक़ तभी वाक़ेअ होती है जब कोई शख़्स अपनी बीवी से कहे कि तुमने फ़लां काम किया तो तुम पर तलाक़ (जिस औरत को एक–दो तलाक़ दी हो और उसकी इद्दत चल रही हो तो वह भी बीवी के हुक्म में है) या निकाह करने पर मुअल्लक़ कर दे मसलनः किसी अजनबिया औरत से यानि जो औरत उसके निकाह में नहीं थी, उससे कहे कि अगर मैं तुमसे निकाह करूं तो तुम्हें तलाक़, तो अगर बीवी या मुअतदह ने वह काम कर दिया जिससे उसने मना किया था, या उस शख़्स ने उस औरत से शादी कर ली जिसे मज़कूरह जुम्ला कहा था, तो उस पर तलाक़ वाक़ेअ हो जाएगी, लेकिन अगर अजनबिया औरत से कहा कि अगर तुम घर में दाख़िल हुईं तो तुम्हें तलाक़, फिर उससे शादी कर ली और वह घर में दाख़िल हुई तो तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी, इसलिए कि इसमें न तो मिल्कियत पाई जा रही है, न मिल्कियत की तरफ़ इज़ाफ़त है। (शामी:2/536–537)

**जब किसी काम पर तीन तलाक़ को मुअल्लक़ कर दे और बाद में पछता रहा हो:**

किसी ऐसी चीज़ पर तलाक़ को मुअल्लक़ करना जो वाक़ेअ हो चुकी है:

अगर दिन के वक़्त शौहर ने बीवी से कहा कि अगर इस वक़्त दिन है तो तुम्हें तलाक़, या रात को कहा कि अगर रात है तो तलाक़, तो बीवी पर फ़ौरी तलाक़ वाक़ेअ हो जाएगी और उसको तन्जीज़ी तलाक़ के हुक्म में माना जाएगा। (हिन्दियाः 1/421)

**किसी ऐसी चीज़ पर तलाक़ को मुअल्लक़ करना जिसका होना मुहाल है:**

अगर किसी ऐसी चीज़ पर तलाक़ को मुअल्लक़ किया जिसका होना मुहाल है, जैसेः कहा कि अगर ऊंट सुई के नाके में दाख़िल हो जाए तो तुझे तलाक़, या अगर चीटियां पहाड़ को उठा ले तो तुझे तलाक़ तो यह माना जाएगा कि तलाक़ को मुहाल पर मुअल्लक़ करने का मक़सद यह है कि उसको तलाक़ वाक़ेअ न हो, लिहाज़ा इस तरह के जुम्लों से तलाक़ वाक़ेअ न होगी। (हिन्दियाः 1/421)

**किसी के घर जाने पर तलाक़ को मुअल्लक़ करना:**

अगर शौहर ने बीवी से कहा कि फ़लां के घर गईं तो तुम्हें तलाक़, तो अगर वह उसके घर में जाएगी तो तलाक़ पड़ जाएगी, लेकिन अगर औरत उस शख़्स की

मौत के बाद गई तो तलाक़ नहीं पड़ेगी, इसलिए कि अब वह घर उस शख़्स का नहीं रहा, बल्कि वारिसों का हो चुका है। (हिन्दियाः 1/434)

### जिस काम पर तलाक़ को मुअल्लक़ किया उसका दूसरे ज़रिये से वाक़ेअ हो जानाः

अगर शौहर ने बीवी से कहा कि तुमको मैके से घर लाऊंगा तो तुम्हें तलाक़, फिर औरत ख़ुद से आ गई, या औरत से कहा कि अगर तुम फ़लां को नहीं लाईं तो तुम्हें तलाक़ और फ़लां ख़ुद से आ गया, या कहा कि अगर तुमने मेरा कपड़ा नहीं दिया तो तुम्हें तलाक़ और फिर ख़ुद से कपड़ा उठा लिया तो इन सूरतों में तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी। (रद्दुल मुख़्तारः 2/562)

### यमीन फ़ोर का हुक्मः

तलाक़े मुअल्लक़ को भी यमीने फ़ोर पर महमूल किया जाता है, इसकी मिसाल यह है कि कोई औरत घर से बाहर जाना चाहती थी, उस पर शौहर ने कहा कि अगर तुम घर से निकलीं तो तुम्हें तलाक़, तो इस जुम्ले को फ़ौरन निकलने पर महमूल किया जाएगा, लिहाज़ा अगर वह उस वक़्त निकले तो उस पर तलाक़ वाक़ेअ हो जाएगी, लेकिन अगर वह उस वक़्त रुक जाए और बाद में निकले तो तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी। इसलिए कि इस तरह के जुम्लों से शौहर का मक़सद उस वक़्त निकलने से मना करने का होता है।
(मब्सूत सरख़्सी, बाबुल अकल, किताबुल ईमानः 8/186)

### किसी फ़ेल के न करने पर तलाक़ को मुअल्लक़ करनाः

अगर शौहर ने किसी चीज़ के न करने पर तलाक़ को मुअल्लक़ किया जैसेः कहा कि अगर मैं फ़लां शहर न जाऊं, या फ़लां से बात न करूं, या फ़लां काम न करूं, तो तुमको तलाक़ तो उसकी यह तालीक़ ज़िन्दगी के आख़िरी वक़्त तक बाक़ी रहेगी, इसलिए अगर शौहर ने अपनी ज़िन्दगी या अपनी बीवी की ज़िन्दगी के आख़िरी लम्हों तक मज़कूरा काम नहीं किये तो उस वक़्त तलाक़ वाक़ेअ होगी, उससे पहले तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी।
(हिदाया व फ़तेहुल क़दीर, किताबुल ईमानः 4/389)

### बीवी से बात करने पर तलाक़ को मुअल्लक़ करना फिर रक़्त व किताबत वग़ैरह के ज़रिए बात करनाः

शौहर ने क़सम खाई कि अगर मैं तुझसे बात करूं तो तुझे तलाक़, तो जब भी उससे बात करेगा तलाक़ वाक़ेअ हो जाएगी। लेकिन ज़बानी बात करने के बजाए अगर तहरीर के ज़रिए बात की, या तहरीरी मैसेज भेजा, या वाट्सऐप पर तहरीरी बात की तो बीवी पर तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी, इसलिए कि बात करने का मतलब ज़बानी बात करना है, न कि इशारे और तहरीर से बात करना है। (फ़तेहुल क़दीर, किताबुल ईमान, बाबुल यमीन फ़िल कलामः 4/418)

### तलाक़े मुअल्लक़ या तलाक़े मशरुत के अल्फ़ाज़ः

शौहर तलाक़ को मुअल्लक़ करते वक़्त जब ऐसे अल्फ़ाज़ का इस्तेमाल करे तकरार का मफ़हूम नहीं रखते हैं, जैसे कहे कि, "अगर तुम इस कमरे में गईं तो तुम्हें तलाक़" तो जब औरत उस कमरे में जाएगी तो तलाक़ पड़ जाएगी और यमीन पूरी हो जाएगी, लिहाज़ा अगर वह दोबारा उस कमरे में जाए तो उस पर तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी, लेकिन अगर मुअल्लक़ करते वक़्त ऐसे अल्फ़ाज़ का इस्तेमाल करे जिन में तकरार का मफ़हूम होता है जैसे कहे कि, "तुम जब–जब उस कमरे में जाओगी या जितनी बार उस कमरे में जाओगी तो तुम्हें तलाक़", तो हर बार कमरे में दाख़िल होने से पहले तलाक़ पड़ जाएगी, फिर जब तीन तलाक़ें हो जाएंगी तो क़सम पूरी हो जाएगी, लिहाज़ा उसके बाद दूसरे शौहर से निकाह करने के बाद दोबारा उसके निकाह में आ जाए तो अब उस कमरे में दाख़िल होने से तलाक़ वाक़ेअ नहीं होगी।
(हिन्दियाः 1/415)

# खुदा है मुहब्बत, मुहब्बत खुदा है

मुहम्मद ज़ाहिद हुसैन नदवी जमशेदपुरी

इन्सान को तबई तौर पर सबसे ज़्यादा मुहब्बत अपनेआप से होती है, ग़ौर कीजिए; दूसरे से भी हम मुहब्बत करते हैं तो इसीलिए कि वह भी हमसे मुहब्बत करे, कोई हुनर, कोई ख़ूबी अल्लाह ने दे रखी है तो उसके इज़हार में भी यही ग़रज़ होती है कि लोग मुझे पहचान लें, कोई मेरी तारीफ़ करता है तो हम ख़ुश हो जाते हैं, हत्ता कि मेरे बच्चों की कोई तारीफ़ कर दे तो यह भी हमारी ख़्वाहिश के ऐन मुताबिक़ होती है। हत्ता कि जन्नत के हुसूल की तमन्ना भी इसीलिए होती है कि हमें अब्दी और उख़्रवी ज़िन्दगी का हमेशा आराम हो, हालांकि जन्नत की तलब और जहन्नम से पनाह मांगना न ग़लत और न किसी मक़ाम के ख़िलाफ़ बात है और मुहब्बते मजाज़ी की तो बात ही रहने दीजिए कि वह तो होती ही है अपनी ख़्वाहिश की तकमील के लिए, चाहे उस पर पाकीज़ा मुहब्बत वग़ैरह के जितने भी हसीं उन्वान लगा दिए जाएं और यह बात तबई तौर पर हर इन्सान के अन्दर कहीं न कहीं पाई जाती है और यह कोई ख़िलाफ़े तबियत या अक़्ल से मुस्तबअद बात भी नहीं, लेकिन शरीअत का मुतालबा यह है कि इन्सान अपनी इस तबई चाहत को अल्लाह की मुहब्बत पर क़ुर्बान करे, यहां तक कि क़ुर्बान करने की कोशिश करे कि ज़ाते ख़ुदावन्दी ही की रज़ा में उसकी रज़ा हो, उन्हीं की ख़ुशी में उसकी ख़ुशी हो, जन्नत से भी ज़्यादा जन्नत के मालिक का दीदार उसका मतलूब हो, जैसा कि हज़रत राबिया बसरिया के वाक़्ये में इस तरह की कैफ़ियत का ज़िक्र आता है।

इसके बाद अल्लाह के सबसे प्यारे नबी हज़रत मुहम्मद (स0अ0व0) की मुहब्बत पर क़ुर्बान करे और यह तबई मुहब्बत अक़्ली और अख़्तियारी मुहब्बत के सामने मग़्लूब हो जाए, इसी मज़मून को इस आयत में बयान किया गया है:

"और जो मोमिन हैं उनको अल्लाह तआला के साथ क़वी मुहब्बत है।" (सूरह बक़राः 165)

एक हदीस में भी यह बात कही गई है कि:

"तुममें से कोई भी उस वक़्त तक कामिल ईमान वाला नहीं हो सकता, जब तक कि मैं उसके नज़दीक उसके बाप, उसके बच्चे और दुनिया के तमाम लोगों से ज़्यादा महबूब न हो जाऊं।" (सही बुख़ारीः 15)

मुहब्बत ही मे पोशीदा दो आलम की सआदत है
मुहब्बत ही को हम इस ज़ीस्त का हासिल समझते हैं

क्योंकि हमारा वजूद अल्लाह के फ़ज़्ल व करम का मज़हर है, उसका करम न होता तो सिरे से हमारा वजूद ही न होता फिर उसके बाद वही–ए–इलाही को हम तक पहुंचाने वाले, हमारी तकलीफ़ों पर बेचैन व बेक़रार हो जाने वाले, हमारी हिदायत के भूखे और मोमिनों के लिए रऊफ़ व रहीम और सरापा एहसान व पैकरे हुस्न–ओ–जमाल, ख़्वाजा–ए–कौनेन, अल्लाह के आख़िरी और दुलारे नबी जी हैं तो हमें आपसे मुहब्बत होनी चाहिए और मुहब्बते इलाही और इश्क़े नबी ही फिर इन्सान की ज़िन्दगी में मोजज़े दिखाती है, जैसा कि अस्हाबे नबी, अबूबक्र (रज़ि0), उमर (रज़ि0), उस्मान (रज़ि0) व अली (रज़ि0), ज़ैबर (रज़ि0), तलहा (रज़ि0), अब्दुर्रहमान (रज़ि0), सईद (रज़ि0), साद (रज़ि0) व उबैदा (रज़ि0) की ज़िन्दगियां ज़ुहद व वरअ, अद्ल व इन्साफ़, सख़ावत व शुजाअत, फ़तेह व फ़ीरोज़मन्दी और अमानत व दयानत के महीरुल अकूल वाक़्यात व करामात से भरी हुई हैं और अब भी अल्लाह व रसूल के सच्चे आशिक़ों और सहाबा की राह पर चलने वाले ग़ाज़ियों और फ़िलिस्तीन के जियालों की ज़िन्दगियां ईमानी फ़ुतूहात से लबरेज़ हैं। सच है:

बेमोजज़ा दुनिया में उभरती नहीं क़ौमें
जो ज़रबे कलीमी नहीं रखता वह हुनर क्या

# न्यायपॉलिका के शरीअत विरोधी फ़ैसले तथा मुस्लिम बुद्धिजीवियों की ज़िम्मेदारी

सैय्यद मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

केवल एक ही धर्म है जिसके बारे में यक़ीन से यह बात कही जा सकती है कि इन्सानी जीवन में घटने वाली हर घटना में वह इन्सान का मार्गदर्शन करता है और न केवल यह कि मार्गदर्शन करता है बल्कि उसका एक नियम बना देता है जिसमें न किसी के अधिकारों का हनन होता है और न किसी को किसी से शिकायत का कोई मौक़ा मिलता है। हमारी कोताही यह है कि इस तरह के मामलात में हम इस्लाम के तय किये हुए उसूल व क़ानून से होने वाले लाभ को देशवासियों के सामने स्पष्ट नहीं कर पाते जिसका नतीजा अदालत के उन फ़ैसलों की शक्ल में सामने आता है जो शरीअत के ख़िलाफ़ होते हैं और पूरी क़ौम के लिये एक समस्या खड़ी कर देते हैं जैसा कि 5–अप्रैल को तलाक शुदा औरत के ख़र्च को लेकर अदालत का एक फ़ैसला सामने आया। अदालत के इस तरह के फ़ैसलों से औरतो में पैग़ाम जाता है कि अदालतें उनका हक़ दिलाने के लिये कोशिश करती हैं और जब अदालत के इन फ़ैसलों को मुस्लिम उलमा चैलेंज करते हैं तो औरतों के जहन में यह बात आती है कि यही वे लोग हैं जो औरतों के अधिकारों की बातें तो बहुत करते हैं लेकिन जब अधिकार मिलने की बात आती है तो यही लोग रोड़ा बनते हैं। इस तरह उनके अन्दर उलमा और फ़ुक़्हा से बदज़नी फ़ैलती है जो कभी–कभी विद्रोह की शक्ल अपना लेती है। मीडिया उसका पूरा फ़ायदा उठाकर उलमा पर लोगों के विश्वास को तोड़ने और इस्लामी शरीअत को विरुद्ध षडयन्त्र करने में कामयाब हो जाते हैं। इस तरह की सूरते हाल में हमको बड़ी सूझ–बूझ के साथ यह लड़ाई लड़नी होगी और औरतों को जो अधिकार इस्लाम ने दिये हैं उन अधिकारों को भी पूरी तरह स्पष्ट करना होगा।

1985 में भी इस तरह के मसले सामने आये थे और उस समय मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के ज़िम्मेदारों ने बड़ी सूझ–बूझ के साथ यह लड़ाई लड़ी थी। हज़रत मौलाना अबुल हसन अली हसनी नदवी ने बोर्ड के ज़िम्मेदारों के साथ इसका अभियान चलाया था। मौलाना ने अध्यक्ष के तौर पर अपने भाषण में इस फ़ैसले के नकारात्मक प्रभाव को स्पष्ट करते हुए और संबंधित औरत के नान व नफ़क़ा (गुज़ारा भत्ता) के बदल की कई शक्लों को पेश करते हुए कहा था:

"तलाक़ शुदा औरत को इद्दत के बाद पूर्व पति से क़ानूनी तौर पर मुस्तक़िल गुज़ारा भत्ता दिलवाना जिसको मेनटेनेंस के शब्द से परिभाषित किया जाता है बौद्धिक रूप से तथा शरीअत के एतबार से भी किसी तरह ठीक नहीं है। शरीअत के अनुसार तो इसलिए नहीं कि कुरआनी आदेशों और उम्मत के अमल के मुताबिक़ इसकी गुंजाइश नही। अक़ली तौर पर इसलिए नहीं कि फिर इसके बाद मुस्लिम माशरे में भी निर्दयता और बेदर्दी की वे घटनाएं होंगी जो देश के एक बहुत बड़े वर्ग में घटित हो रही हैं और नव ब्याही औरतें वांछित जहेज़ न लाने पर जलायी जा रही हैं और उनसे किसी तरह पीछा छुड़ाया जा रहा है और फिर तलाक़शुदा औरत के गुज़ारा भत्ते से पीछा छुड़ाने के लिये भी इस तरह की घटनाएं घटित हुई हैं। तलाक़ शुदा औरत की इस मुस्तक़िल क़ानूनी शक्ल (गुज़ारे को छोड़कर) को शरीअत के बताए हुए इन व्यवस्थाओं को ज़िन्दा और क़ायम करना पड़ेगा, जिनकी शरीअत ने ताकीद की है और जो इस्लामी

शरीअत की बरकात में से हैं। जैसे औरत को माता–पिता और दूसरे वारिसीन की विरासत से शरई हिस्सा दिलाना जो विभिन्न परिस्थितियों में वाजिब और बहुत से ख़ानदानों और समाज में अर्से से रुका हुआ है। तलाक़शुदा औरत के क़रीबी रिश्तेदारों औलाद, भाईयों और अगर माता–पिता ज़िन्दा हैं तो उनाके इसको साथ हमदर्दी व सुहानुभूति और सिलारहमी को बढ़ावा देना उसकी गुज़ारे का मुनासिब बन्दोबस्त करनावा।

अगर दूसरे निकाह की उम्र और हालात हैं तो इसकी कराने में सहायता करना तथा इस्लामी राजकोष की स्थापना जिससे लाचार और ज़रूरतमन्द को आवश्यक आवश्यकताओं और जीवन यापन के साधन उपलब्ध कराये जाए। इससे बढ़कर पूरे मुस्लिम समाज में हमदर्दी, सदाचार, त्याग व सखावत का जज़्बा पैदा करना जो हज़ार बीमारियों का इलाज है और हज़ार मुश्किलों व समस्याओं का हल है और जो मुस्लिम समाज को क़ानून बनाने से रोकता है और शुरूआती ज़माने और इस्लाम के आरम्भिक इतिहास में उसके प्रकाशित उदाहरण हैं और इसका ज़िन्दा सुबूत मिलता है। यह हैं करने के वह काम जिनको जल्द से जल्द शुरू होना चाहिये और जो इस्लाम की रूह, स्वभाव और अल्लाह की शरीअत और आसमानी शिक्षाओं से पूरी तरह समानता रखते हैं और इन्हीं में शरीअत का अस्ल सुरक्षा और इस मुल्क व ज़माने में मुसलमानों के साहब–ए–शरीअत व चरित्रवान और श्रेष्ठ, सदृढ़, सम्मानित, ख़ुद्दार और ग़ैरतमन्द समुदाय की हैसियत से बाक़ी रखने की ज़मानत है।''

शरीअत की व्याख्या वे लोग करें जो शरीअत के विभिन्न भागों से पूरी तरह से परिचित हों लेकिन क्या कहा जाए शरीअत पर भरोसा हम मुसलमानों को ही नहीं। यह फ़ैसले जो शरीअत के विरोध में होते हैं इसमें एक बड़ा दखल हमारा भी है। ग़ौर कीजिए, दारुल कज़ा में कितने मुसलमान अपने मसले हल कराते हैं? उलमा से कितने लोग मसला पूछते हैं? मदरसों में जो फ़िक़ही समस्याओं से ताल्लुक रखते हैं उनके पास जाकर कितने लोग अपने मुक़द्दमे पेश करते हैं? आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड़ ने दारुल कज़ा की स्थापना का अभियान शुरू किया था लेकिन अफ़सोस कि इस्लामी अदालत में इक्का दुक्का ही मुक़द्दमें आते हैं और हज़ारों मुक़द्दमें ग़ैर मुस्लिमों की अदालत में जाते हैं। फ़ैसले हम ख़ुद अपने ख़िलाफ़ करवाते हैं। ग़ैर मुस्लिम जजेज़ के पास हम ख़ुद जाते हैं। होना तो यह चाहिये कि कोई भी फ़ैसला हमारा दारुल कज़ा में हो। हमारा फ़ैसला कुरआन व हदीस से हो। कुरआन मजीद में अल्लाह तआला ने साफ़–साफ़ इरशाद फ़रमा दिया है:

''ऐ नबी! आपके रब की क़सम! वे तो मोमिन हो ही नहीं सकते, जब तक अपने आपसी झगड़ों में आपको हकम न बना लें, तथा आपके फ़ैसले से अपने दिल में कोई तंगी महसूस न करें और पूरी तरह से स्वीकार न कर लें। (सूरह निसाः 65)

इससे यह बात मालूम होती है कि मुसलमान चाहे किसी इलाक़े में आबाद हों, उन पर यह बात वाजिब है कि शरई अदालत की स्थापना करें कि उसके बिना अपने झगड़ों में अल्लाह व रसूल (स0अ0) के फ़ैसले की तरफ़ लौटना संभव नहीं।

मुसलमानों को संकल्प लेना होगा कि उनका कोई भी काम शरीअत के विरोध का कारण न बन जाए वरना उनका ईमान ख़तरे में है। शरीअत पर अमल करना हम पर वाजिब है। शादी के जो ग़ैर शरई मसले हैं उनको अपने समाज से ख़त्म करना होगा। जहेज़ का मसला हो या और पारिवारिक झगड़े, इन सब में हम शरीअत की तरफ़ लौटेंगे और शरीअत जो फ़ैसला कर देगी उसको स्वीकार करेंगे।

# मुल्क की सुलगती सूरतेहाल और हमारी ज़िम्मेदारी

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूँनी नदवी

बिलाशुब्हा यह हिन्दुस्तान के इतिहास का इन्तिहाई अलमनाक हिस्सा है कि आज़ादी के बाद से यहां के बहुसंख्यक व अल्पसंख्यक वर्ग के बीच एक ज़बरदस्त खाई हो गई है, जिसके नतीजे में उन दोनों के दरमियान आपसी एतमाद और गहरे इत्तिहाद की फ़िज़ा बनाना नामुमकिन नज़र आता है। अफ़सोस यह है कि इस तवील व अरीज़ मुल्क में मुख़्लिस अफ़राद व जमाअतों की जानिब से ऐसी क़ाबिले क़द्र कोशिशें भी नहीं की जातीं जिनके ज़रिये यह खाई भरी जाए। फ़िरकावाराना नफ़रत का बाज़ार ठन्डा पड़े, तश्द्दुद व जारिहियत में कमी वाक़ेअ हो और यह मुल्क ऐसी ग़ैर मामूली ख़ुदादाद सलाहियतों और तवानाइयों के ज़रिये दुनिया के मंज़रनामे पर एक सुपर पॉवर बनकर उभर सके।

इस वक़्त हमारे मुल्क का सबसे बड़ा अलमिया यह है कि यहां की सियासी जमाअतें अपने बुरे मक़सदों को पूरा करने और उनको पाने के लिए किसी भी हद से गुज़र सकती हैं, उसकी ख़ातिर चाहे उन्हें ख़ून की नदियां बहानी पड़ जाएं, या इन्सानी सरों के कुतुबमीनार बनाने पड़ जाएं। उन्हें अपनी जमाअत के बचाव और अपनी कुर्सी की हिफ़ाज़त के लिए इन्सानी ज़मीर और मेयार को फ़रामोश करना गवारा है लेकिन इक़्तिदार से दस्तबरदार होना पसंद नहीं। यही वजह है कि इस वक़्त मुल्क में सियासी जमाअतों के ज़ेरे साया ऐसी तंज़ीमों, कारकुनान और अफ़रादेकार को शह दी जा रही है जो उनके नापाक अज़ाएम को अमली जामा पहनाने में मुआविन हों, मुल्क की फ़िज़ा को ख़राब कर सकें और उसको तामीरी रुख़ से हटाकर तख़्रीबी रुख़ पर डाल सकें।

अगर देखा जाए तो यही वह मस्मूम ज़हनियत है जिसके नतीजे में वतने अज़ीज़ के अन्दर कभी फ़साद होते हैं, कभी किसी की लिंचिंग होती है, कभी एक मख़्सूस तबक़े के मज़हबी ख़ासियत को तन्क़ीद का निशाना बनाया जाता है और कभी उनके मज़हबी मक़ामों पर क़दग़न लगाया जाता है। हक़ीक़त में इन सबका मक़सद मुसलमानों की इज्तिमाई व मिल्ली नस्लकुशी की कोशिश है, ताकि इस मुल्क में मुसलमानों की कोई मुमय्यज़ जमाअत का नाम–ओ–निशान भी बाक़ी न रह सके। इसी लिए वक़्फ़े–वक़्फ़े से पूरी प्लानिंग के साथ ऐसे शोशे छोड़े जाते हैं जिनसे मुल्क में इन्तिशार की फ़िज़ा पैदा हो। बाबरी मस्जिद तनाज़े के मौक़े पर मुसलमानों से यह वादा किया गया था कि आइन्दा उनकी किसी भी मज़हबी जगह को निशाना नहीं बनाया जाएगा और न ही तारीख़ का नये सिरे से सफ़र शुरू किया जाएगा, लेकिन इसके बावजूद क़ानून के ज़ेरे साया खुल्लम–खुल्ला धांधली की जा रही है। कभी बनारस की ज्ञानव्यापी मस्जिद के सर्वे का नोटिस जारी होता है, तो कभी मथुरा की शाही ईदगाह पर सवालिया निशान खड़ा होता है, कभी संभल की शाही जामा मस्जिद को मंदिर बताया जाता है, तो कभी बदायूं की शाही जामा मस्जिद पर अपना हक़ जमाया जाता है। ज़ाहिर है कि यह मुल्क की ऐसी नागुफ़्ता बिही सूरते हाल है जिसकी नज़ीर पिछली तारीख़ में शायद हमें नज़र न आए। बिलाशुब्हा हुकूमती सतह पर यह तर्ज़ेअमल फ़िरक़ावाराना नफ़रत को शह देने में जलती आग पर घी डालने के बराबर है, अगर ग़ौर किया जाए तो इन मज़मूम कोशिशों के पीठ पीछे मुल्क के बहुसंख्यक वर्ग की मेहनत नहीं बल्कि हक़ीक़त में उनको अस्ल मक़सद से भटकाना मक़सूद है, ताकि शहरियों और मुबस्सिरीन की आंखों पर यह पर्दा पड़ा रहे कि यह मुल्क तबाही व बर्बादी के किस मुहीब ग़ार में जा रहा है।

अगर देखा जाए तो इस वक़्त इस मुल्क को सबसे बड़ा ख़तरा मुल्क में पनपने वाली उस फ़ासिद ज़हनियत से है जिसकी निगाह में बस एक ही तबक़े का मफ़ाद अहम है। अफ़सोस की बात यह है कि कमो बेश यह ज़हनियत हर शोबे, हर महकमे और हर तबक़े में सरायत कर चुकी है, हक़ीक़त में यह वह दीमक है जो पूरे मुल्क की तामीर व तरक़्क़ी को चाट जाएगा। आज न पुलिस, न इन्तिज़ामिया इस ज़हनियत से महफ़ूज़ है और न मुल्क

की बावक़ार अदालतें इस मर्ज़ से पाक, न यहां का मीडिया ग़ैरजानिबदार है और न ही यहां के आला व रोशन दिमाग़ मुबस्सिरीन। यही वजह है कि आज ऐवाने आला में एक मन्सूबाबन्द प्लानिंग की जाती है। फिर चंद औबाश को शह दी जाती है और उन्हें इन्साफ़ के मन्दिरों से शरारत अंगेज़ी का सर्टिफ़िकेट थमा दिया जाता है, फिर उनकी हिफ़ाज़त के लिए क़ानून की पासदारी का हवाला देते हुए इन्तिज़ामिया की सरपरस्ती भी उन्हें हासिल हो जाती है। इसके बाद अगर फ़रीक़े मुख़ालिफ़ की तरफ़ से जवाब में कोई हरकत सरज़द हो जाए तो एकतरफ़ा कार्यवाही की जाती है, अमन की दुहाई दी जाती है, तश्द्दुद का इल्ज़ाम लगाया जाता है, ज़ालिमाना रवैया बरता जाता है और सबसे बढ़कर मीडिया चीख़–चीख़कर इस पूरे तमाशे को ज़ाफ़रानी रंग में पेश करने की इन्तिहाई शक्लें अख़्तियार करता है।

पिछले दिनों दिन जगहों पर फ़साद हुए या तश्द्दुद व जारिहियत के सोहाने रूह वाक़्यात सामने आए, अगर ग़ौर किया जाए तो उन सभी में यही तरतीब पसे पर्दा कारफ़रमा नज़र आती है, गोया यह एक पूरी मन्तिक़ी चाल है जिसको बहुत सोच–समझ कर नाफ़िज़ुल अमल किया जाता है। संभल की जामा मस्जिद का ताज़ा वाक़्या इसकी बेहतरीन मिसाल है, जहां जामा मस्जिद के सर्वे को लेकर इन्तिहाई दुखद वाक़्या पेश आया। इस सिलसिले में अब जो हक़ीक़तें सामने आ रही हैं, उनसे साफ़ अंदाज़ा होता है कि सर्वे का मक़सद ही कुछ और था, वरना ऐसा कौन सा सरकारी सर्वे है जो इतनी उजलत में किया जाए और रातों–रात और सुबह सवेरे सरकारी अफ़सर मस्जिद के ज़िम्मेदारों को मजबूर करें कि वह उसी वक़्त सर्वे कराएं।

मुल्क की यह सुलगती सूरतेहाल एक तरफ़, जिसका ताल्लुक़ यक़ीनन आला दिमाग़ क़ायदीन और सियासी जमाअतों से है, जिन्होंने उस मुल्क को तरक़्क़ी के बजाए तख़्रीब के दहाने पर लाकर खड़ा कर दिया है। लेकिन ग़ौर का मक़ाम यह भी है कि यह वही मुल्क है जिसमें मुसलमानों ने कम से कम एक हज़ार साल तक हुकूमत की है और इसके हुदूद को ग़ैरमामूली वुसअत बख़्शी है, इसको अपने ख़ूने जिगर से सींचा है और उसकी आज़ादी में जानों के नज़राने पेश किये हैं और कलीदी रोल निभाया है, मगर आख़िर ऐसी कौन सी चूक हुई है जिसकी बिना पर उसके ऊपर इस मुल्क में इतना ज़्यादा अर्सा–ए–हयात तंग हुआ जाता है, एक साहिबे ईमान क़ौम होने के नाते हमारा यह फ़र्ज़ बनता है कि हम अपना जाएज़ा ज़रूर लें।

इस सिलसिले में सबसे बड़ी ग़लती जो हुई वह यह कि हम इस मुल्क में दीने इस्लाम की तरजुमानी उस सतह पर नहीं कर पाए जो यहां के लोगों के लिए कशिश की वजह से हो, उनके अन्दर हमारे मज़हबत को जानने और समझने की जुस्तुजू पैदा हो, उन्हें हमारी अज़ानों का मतलब पता हो, उन्हें हमारी नमाज़ों के फ़ायदों का इल्म हो, उन्हें हमारे निज़ामे अख़्लाक़ से उन्सियत हो, उन्हें इस्लाम के एहतिरामे इन्सानियत का सबक़ याद हो और उन्हें यह यक़ीन हो कि इस मुल्क के लिए मुसलमानों का वजूद इन्तिहाई ज़रूरी है।

मौजूदा हालात से नबरदआज़मा होने के जो हल भी तलाश किये जाएं और तय किये जाएं, उनकी अहमियत व नाफ़ेईयत अपनी जगह, लेकिन सबसे पहले हम पर ज़रूरी है कि हम इस मुल्क में अपने बिरादराने वतन के साथ ज़मीनी सतह पर मिलकर चलने की कोशिश करें, उनको क़रीब करने और उनको मानूस करने की कोशिश करें, उनकी ग़लतफ़हमियों को दूर करें, इन्सानी बुनियादों पर उनसे अपने रिश्तों को सुधारें, उन्हें बताएं कि अपने वतन से मुहब्बत हमारे ख़मीर में शामिल है, उन्हें अपने तर्ज़े अमल से यह साबित कराएं कि मुसलमान झूठ नहीं बोलते, रिश्वत नहीं लेते, ज़ुल्म नहीं करते, दग़ाबाज़ी नहीं करते, धोखा नहीं देते, ख़यानत नहीं करते, चोरी नहीं करते, नफ़रत नहीं फैलाते, दहशतगर्दी नहीं मचाते और ज़ोर–ज़बरदस्ती से काम नहीं लेते, वह एक ख़ुद्दार व ग़ैरतमन्द क़ौम हैं, जिनकी तबिअत में इहतिसाबे नफ़्स और एहतिसाबे कायनात है और ख़िदमते ख़ल्क़ उनकी आदत में शामिल है। सच्ची बात यह है कि यह वह सुनहरे उसूल हैं जिन्हें मुसलमान अगर इस मुल्क के किसी एक हिस्से में भी अपना लें तो यक़ीनन हालात में तब्दीली आएगी और नफ़रत के सौदागरों की दुकानें सर्द मोहरी का शिकार होंगी और मुल्क के हालात नार्मल होंगे, लेकिन इसके लिए सबसे पहले मुसलमानों को एक मजनूनाना व सरफ़रोशाना कैफ़ियत के साथ मैदाने अमल में उतरना होगा।

# मुसलसल और पाएदार कोशिश की ज़रूरत

"यूरोप के हुक्माए तारीख़ कहते हैं कि मुसलमानों की तरक़्क़ी व तनज़्ज़ुली का एक ही सबब है यानि ग़ैर क़ौमों के साथ निस्बती और इज्तिमाई मेल–जोल। हम भी कहते हैं कि मुसलमानों की तरक़्क़ी और तनज़्ज़ुली दोनों का एक ही सबब है और वह उनका वक़्ती और फ़ौरी जोश, वह सैलाब के मानिन्द पहाड़ को अपनी जगह से हिला सकते हैं, लेकिन कोहे कुन की तरह एक–एक पत्थर जुदा करके रास्ता साफ़ नहीं कर सकते, वह बिजली की मिस्ल एक आन में खरमन को जलाकर ख़ाक़ स्याह कर सकते हैं, लेकिन चींटी की तरह एक–एक दाना नहीं ढो सकते, वह एक मस्जिद की मुदाफ़अत में अपना ख़ून पानी की तरह बहा सकते हैं, लेकिन एक मुन्हदिम मस्जिद को दोबारा बनाने के लिए मुसलसल कोशिश जारी नहीं रख सकते।

हमारी नाकामी का अस्ल सबब क्या है? यह कि हम आंधी की तरह आते हैं और बिजली की तरह गुज़र जाते हैं। हमको दरिया के उस पानी की तरह होना चाहिए जो आहिस्ता–आहिस्ता बढ़ता है और कई सालो में किनारों को काट कर अपना दायरा बढ़ाता जाता है, कामयाबी सिर्फ़ मुसलसल और पाएदार कोशिश में है, हिमालय की बर्फ़ से भरी चोटियां धीरे–धीरे पिघलती हैं लेकिन कभी जमुना और गंगा को सूखने नहीं देती। आसमान का पानी एक घंटे में दश्त–ओ–जबल को थल बना देता है, लेकिन चंद ही रोज़ में हर तरफ़ ख़ाक उड़ने लगती है।

तुम्हारी इबरत के लिए ख़ुद तुम्हारी क़ौमियत की पैदाइश का सबक़ काफ़ी है, इस्लाम इक्कीस साल में तकमील को पहुंचा। मक्का में रसूलुल्लाह (स०अ०व०) तेरह बरस रहे और इस लम्बे अर्से का हर लम्हा दावत–ओ–तब्लीग़ में गुज़रा, फिर भी वैसी कामयाबी न हो सकी, लेकिन आप उससे बहुत उदास न हुए और जब आप (स०अ०व०) के चचा ने बुलाकर समझाया कि इस ख़्याले ख़ाम (अल्लाह के दीन की तब्लीग़) से बाज़ आओ, उस वक़्त आपकी ज़बान से जो बात निकली, उसकी रोशनी उस वक़्त तक मांद न होगी, जब तक आसमान पर आफ़ताब व माहताब की रोशनी बाक़ी है, आप (स०अ०व०) ने फ़रमाया:

"कुरैश अगर मेरे दाहिने हाथ में सूरज और बाएं हाथ में चांद रख दें तो भी इस कोशिश से बाज़ नहीं आऊंगा।"

जिस क़ौम ने इस अज़्म व इस्तिक़लाल की आग़ोश में तरबियत पाई हो, उसके लिए अफ़सोस की बात है कि एक–एक मिनट में उसका रंग बदल जाए। वह चांद और सूरज को पाकर नहीं, बल्कि चांद की तरह एक पीली धातु से ललचाकर और सूरज की तरह एक सफ़ेद धातु से डरकर जानबूझकर उसके इरादे का रुख़ इस तरह पलट जाए, गोया वह बादे सर–सर (तूफ़ानी हवा) के झोंके में एक ख़िज़ाँ रसीदा (मुरझाया हुआ) दरख़्त की पत्ती थी।

हम एक ही बात कहना चाहते हैं कि कामयाबी सिर्फ़ मुसलसल (सतत–निरंतर) और पाएदार (दृढ़–मज़बूत) कोशिश में है।"

(शज़राते सुलेमानी: १/३८–४०)

सैय्यदुत्ताइफ़ा अल्लामा सैय्यद सुलेमान नदवी (रह०)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 12 ❋ December 2024 ❋ Volume: 16

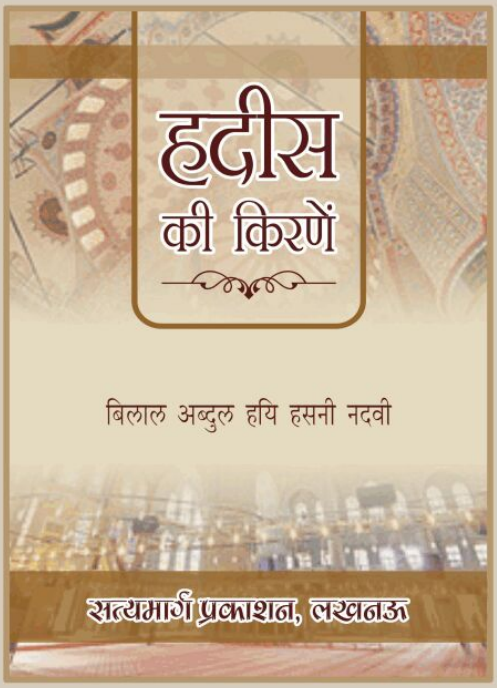


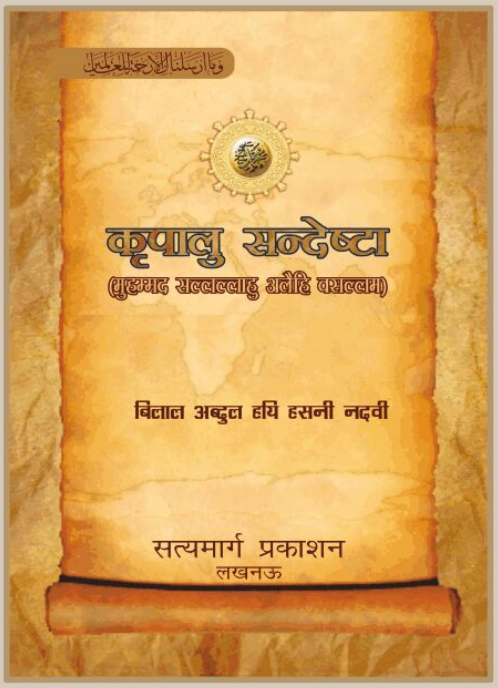


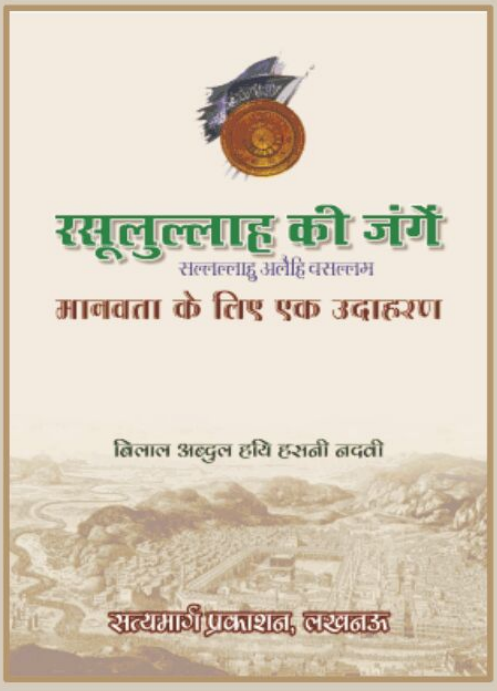


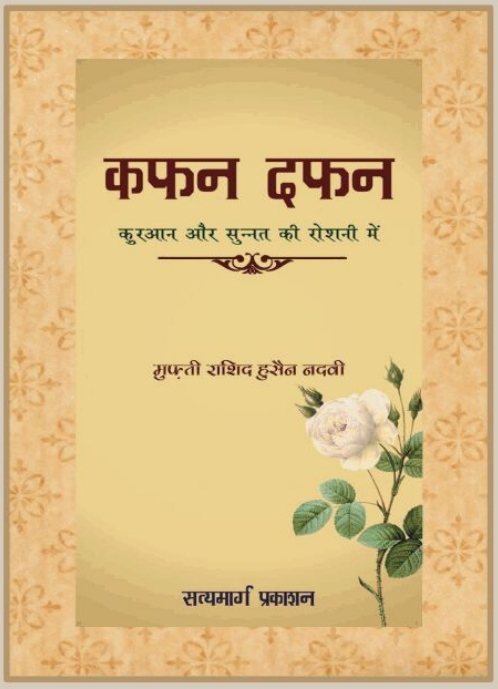


Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
**MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI**
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.